राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक

आनन्द कुमार R.A.S.

[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

२२/-
के अनुसार
अधिकारी
रा० प्रा० वि० प्र० भरतपुर

ग्रन्थाङ्क 183

शेषकवि प्रणीत

तखतविलासचम्पू

सम्पादक

ओ३म्प्रकाश शर्मा

डा. गोविन्दराम चरौरा

प्रकाशक

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1996

मूल्य : **22.00**

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक
आनन्दकुमार R.A.S.
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क 183

तखतविलासचम्पू

सम्पादक
ओ३म्प्रकाश शर्मा
डा. गोविन्दराम चरौरा

प्रकाशक
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1996 मूल्य 22.00

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित
सामान्यतः अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानप्रदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्टग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक
आनन्दकुमार R.A.S.

ग्रन्थाङ्क 183

तखतविलासचम्पू

© प्रकाशक

प्रकाशक
राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
प्रथमावृत्ति 500 ई. 1996

मुद्रक :
प्रिंटिंग हाउस, जालोरी गेट, जोधपुर
☎ : 27708

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रकाशकीय

मारवाड़ क्षेत्र का चप्पा-चप्पा जहाँ शौर्य, आत्मोत्सर्ग एवं बलिदान की अमर गाथाओं से सुवासित है वहाँ साहित्यिक उन्नयन के क्षेत्र में भी यहां के सारस्वत साधकों की गाथा दिगदिङ्न्त में विश्रुत रही है। डिंगल-पिंगल निवद्ध भाषा ग्रन्थों के प्राचुर्य की तुलना में सुरभारती के समाराधक संस्कृतज्ञों एवं साहित्यकारों की लेखनी संख्यात्मक रूप से भले ही उतनी मुखरित न हो सकी हो किन्तु इन कतिपय सरस्वती पुत्रों के साहित्यिक अवदान को गुणात्मकता की दृष्टि से अगर विश्ववंद्य भी कह दें तो इसमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं है। 'तावत् भा भारतेर्भाति यावत् माधस्य नोदय' वाला पुरा कथन आज भी भिन्नमालवास्तव्य माघ कवि का स्मरण कराता है जो शिशुपालवध महाकाव्य के प्रणेता थे। मारवाड़ के कवियों की इस सृजन परम्परा में आगे चलकर सूरसिंहवंशप्रशस्ति, अजितोदयमहाकाव्य, अजीतचरित्र, भीमप्रवन्ध, चिमनीचरित, मानप्रशस्ति, मानभास्करोदय चम्पू आदि कई काव्यों के अलावा वर्तमानकालिक पं. नित्यानन्द शर्मा, पं. हरिराय, पं. लालचन्द, पं. गोपीकिशन, पं. श्रीराम दवे एवं पं. जगदीशचन्द्र आचार्य आदि कई विभिन्न कवियों की रचनाओं को भी लिया जा सकता है।

प्रस्तुत काव्य 'तखतविलास चम्पू' शेष कवि विरचित एक अभिनव षट् काण्डात्मक काव्य है जिसमें मारवाड़ नरेश तखतसिंह की गंगा यात्रा का प्रमुख रूप से निरूपण है जो विक्रम संवत् 1911-12 में सम्पन्न हुई थी। यहां यह स्मरणीय है कि इतिहासकारों ने तखतसिंह को एक विलासी शासक के रूप में चित्रित कर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री कर ली है किन्तु शेष कवि ने इस काव्य में तखतसिंह को अत्यन्त विद्याव्यसनी, काव्यप्रणेता एवं ऐहिक लिप्सा से विरहित बताया है जो निश्चय ही शोध का विषय है। तखतसिंह के वारे में महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश के माध्यम से भी तखतराज पदावली प्रकाशित हुई है। उसमें भी महाराजा को विद्याव्यसनी एवं संगीतज्ञ के रूप में चित्रित किया है। जो भी हो प्रस्तुत काव्य कतिपय अन्वेषणीय बिन्दुओं के

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अलावा एक सरस चम्पू काव्य भी है जिसमें इतिहास एवं काव्य का सुन्दर समन्वय है ।

पुरातन ग्रन्थमाला के इस 183 वें पुष्प को विद्वज्जगत् के समक्ष समर्पित करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है ।

आनन्द कुमार R.A.S.
निदेशक

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अनुक्रम

क्र.	विषय	पृष्ठाङ्क
1.	प्रकाशकीय	
2.	पुरोवाक्	i-xiii
3.	प्रथम काण्ड	1-6
4.	द्वितीय काण्ड	7-24
5.	तृतीय काण्ड	25-36
6.	चतुर्थ काण्ड	37-38
7.	पञ्चम काण्ड	39-40
8.	षष्ठ काण्ड	41-46

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पुरोवाक्

राजस्थान का इतिहास उसके अमर हुतात्माओं की अदम्य वीरता, शौर्य, संस्कृति एवं सम्मान के संरक्षणार्थ जौहर की धधकती ज्वाला में लीलया आत्मोत्सर्ग करने वाली अमर वीराङ्गनाओं की दृष्टि से ही नहीं बल्कि कला, स्थापत्य एवं साहित्य सर्जन के क्षेत्र में भी अग्रणी रहा है। भारत का महान् ज्योतिर्विद् वराहमिहिर ब्रह्मगुप्त, शिशुपालवध का प्रणेता माघ, जैन साहित्यकार सिद्धार्थसूरि, विविध ग्रन्थों का रचयिता उद्योतनसूरि, ललितविग्रहराज नाटक का कर्त्ता सोमदेव, हम्मीर-महाकाव्य का प्रणेता नयचन्द्रसूरि एवम् कुमारपालचरित के कर्त्ता आदि ने अपनी अनवरतसाधना, काव्यप्रतिभा और प्रगाढ़ पाण्डित्य से इस क्षेत्र के साहित्योन्नयन में जो योग दिया वह यहाँ के स्वर्णिम अतीत की गौरवगुम्फित स्निग्ध एवं उज्ज्वल गाथा है। यहाँ के साहित्याकाश में कविरूप नक्षत्रों की उत्तरोत्तर वृद्धि का क्रम एक अविराम प्रक्रिया के रूप में दृष्टिगोचर होता है जब हमारे समक्ष कर्मचन्द्र-वंशोत्कीर्त्तनकाव्य, अमरसार, अमरकाव्य वंशावली, राजरत्नाकर, अमरकाव्य, राजप्रशस्ति, ईश्वरविलास महाकाव्य, सुर्जनचरितमहाकाव्य, उम्मेदसिंहचरित काव्य, शत्रुशल्यचरित महाकाव्य, अजितोदय महा-काव्य, भीमप्रबन्ध, मानसिंह-प्रशस्ति एवं मानभास्करोदयचम्पू जैसे ग्रन्थरत्न उपस्थित होते हैं। वैदुष्य की इस परम्परा से जुड़े वर्तमान समय में भी पण्डित नित्यानन्द शर्मा, पं. लालचन्द, गोस्वामी हरिराय, पं. गोपीकृष्ण, पं. श्रीरामदवे और श्री जगदीशचन्द्र प्राणशङ्कर आचार्य आदि कई सुर भारती की सेवा में रहकर उसे और समृद्ध बनाया है।

संस्कृत काव्य में चम्पूकाव्य की विधा अत्यन्त प्राचीन है। काव्या-दर्श के प्रणेता महाकवि दण्डी ने जहाँ इसका निर्वचन 'गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते' कहकर किया वहीं चम्पूरामायण एवम् विश्वगुणा-दर्श के प्रणेताओं ने इसका आस्वादन वाद्य एवं संगीत का समन्वय अथवा द्राक्षा एवं मधु के सम्मिश्रण के रूप में किया। वस्तुतः चम्पू-काव्य गद्यपद्यमिश्रित एक सरस संरचना है जिसमें वर्ण्य विषय को गद्य-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पद्यानुबन्धन से प्रभावशाली बनाकर चमत्कार का सृजन किया जाता है। महाकवि दण्डी के पूर्व से लेकर अद्यतन अनेक चम्पूकाव्यों का प्रणयन हुआ है किन्तु काव्य की इस विधा का नाम चम्पू क्यों पड़ा, यह प्रश्न अभी तक अनुत्तरित है। जो भी हो, इतना अवश्य स्पष्ट है कि इस विधा की परम्परा सातवीं शताब्दी से पूर्व ही निश्चित रूप से विकसित हो चुकी थी। वैसे इस तरह के काव्यों की निर्माण परम्परा का अनुवर्तन प्रथम शताब्दी ई. के आसपास हो चुका था। गद्य पद्यमयभाषा के उदाहरण प्राचीनतम ग्रन्थों में मिलते हैं। बौद्धजातकों में इस प्रकार की भाषा का प्रचुरता से प्रयोग मिलता है। जातकमाला तथा हरिषेण की प्रशस्ति गद्य-पद्य का संमिश्रण है। गुप्तकाल के शिलालेखों में चम्पू काव्यों की रचना का उल्लेख लगभग चौथी शताब्दी से होना वर्णित है। फिर भी काव्यादर्श में वर्णित चम्पूकाव्य के सम्पूर्ण लक्षणों का निर्वाह करने वाले काव्य १० वीं शताब्दी से ही मिलते हैं।

पहला उपलब्ध चम्पूकाव्य त्रिविक्रमभट्ट का नलचम्पू है जिसका समय ९१५ ई. के आसपास है। सात उच्छ्वासों में विभक्त यह काव्य अपूर्ण ही उपलब्ध है। नलदमयन्ती की सुविख्यात प्रणयकथा इसका विषय है। श्लेष के बहुत प्रयोग की वजह से यह काव्य सरस बन पड़ा है। सोमदेवसूरि नामक जैन कवि ने ९५९ ई. में यशस्तिलक चम्पू की रचना की। आठ आश्वासों में विभक्त इस काव्य में जैनधर्म के सिद्धान्तों के विस्तृत विवेचन के साथ अवन्तिनरेश यशोधर की रानी की कपट योजनायें, राजा की मृत्यु तथा विभिन्न मानवेतर योनियों में परिभ्रमणोपरान्त मनुष्ययोनि में जन्म व अन्ततोगत्वा जैनधर्म की दीक्षा ही इसका प्रतिपाद्य है। धारा नगरी के प्रसिद्ध नरेश भोजराज ने ११ वीं शताब्दी में रामायण चम्पू की रचना की किन्तु यह रचना भी अपूर्ण ही उपलब्ध है। इसका कथानक किष्किन्धा-काण्ड तक ही है। इसके बाद लक्ष्मण भट्ट नामक कवि ने युद्धकाण्ड तथा वेंकटराज नामक कवि ने उत्तरकाण्ड की रचना कर इस काव्य को पूर्ण किया। ११ वीं शताब्दी के सोढ्ढल नामक कायस्थ ने उदयसुन्दरीकथाचम्पू का सृजन किया जिसमें वर्ण्य विषय नागवंशीय राजकुमारी उदयसुन्दरी और प्रतिष्ठान के राजा मलयवाहन की प्रणय कथा ७ उच्छ्वासों में है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उपर्युक्त कतिपय चम्पू काव्यों के अतिरिक्त और भी कई उल्लेखनीय नाम हैं जिनमें मदालसा चम्पू (त्रिविक्रमभट्ट रचित) जीवन्धर चम्पू (१० वीं शताब्दी), अभिनव-कालिदास का भागवत चम्पू (११ वीं शताब्दी), सोमेश्वरदेव का कीर्त्तिकौमुदी चम्पू, वासुदेव रथ का (१५ वी श.) गंगावंशानुचरित, अनन्तभट्ट (१५ वीं श.) का भारत-चम्पू, विजयनगरनरेश अच्युतराव (१६ वीं. श.) की विदुषी पत्नी तिरुमलाम्बा का वरदराजाम्बिकापरिणयचम्पू, राजचूडामणि दीक्षित (१६ वीं) का भारतचम्पू, जीवगोस्वामी (१६वीं. श.) का गोपालचम्पू मित्रमिश्र (१७ वी श.) का आनन्दकन्द चम्पू, चिदम्बर (१६ वीं श.) का भारतचम्पू, शेषकृष्ण का पारिजातहरण चम्पू, चन्द्रकवि (१७ वीं श.) का द्रौपदी परिणय चम्पू, वेंकटाध्वरि (१७ वीं) के (१) विश्व-गुणादर्श चम्पू (२) वरदाभ्युदय चम्पू, (३) उत्तर चम्पू (४) श्रीनिवास चम्पू आदि चार काव्य, वाणेश्वर अर्द्ध ऐतिहासिक चित्र चम्पू काव्य (18 वीं श.), कृष्णकवि का मन्दारमरन्द चम्पू और अनन्त कवि ने चम्पाभारत लिखकर चम्पूकाव्यों की परम्परा को अविच्छिन्न बनाये रखा।

जोधपुर के महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश में देवराजसरयूपारीय विरचित अनिरुद्ध चम्पू, केशवरचित नृसिंह चम्पू तथा राजस्थान, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के जोधपुर संग्रहालय में नन्दनन्दनविहारचम्पू तथा इसी विभाग के कोटा संग्रहालय में शंकरभट्ट विरचित (१८१६ वि. सं.) गंगावतरण चम्पू और केशवभट्ट रचित चम्पू काव्य की प्रतियाँ उपलब्ध हैं।

× × ×

प्रस्तुत तक्तविलास अथवा तखतविलास चम्पू की प्रति राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के जयपुर स्थित कार्यालय में सुरक्षित है। इसका सम्पादन अद्यावधि उपलब्ध इसकी एकमात्र प्रति के आधार पर किया गया है। प्रति का विवरण निम्न प्रकार है—

कर्त्ता — शेष कवि

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आधार	—	कागज
लिपि	—	देवनागरी
पत्र सं.	—	४८
माप	—	२१.५ × १३ से. मी.
पक्ति	—	१०
लेखन की स्थिति	—	सुवाच्य
प्रतिलिपि काल	—	संवत् १६१२

आदि अंश—

श्री गणेशाय नमः । श्री देव्यै नमः ।
आर्यां नमामि वनजायतलोचनाढ्या-
मामौक्तहारपरिशोभितकंबुकण्ठीम् ।

अन्तिमांश—इति श्रीशेषप्रणीततक्तचम्पूप्रबन्धः समाप्तः ।
श्रीशाम्बो भातु भवताम्म् ।। श्री ।।

× × ×

काव्य का शुभारम्भ पौराणिक शैली से अनुप्राणित है जहाँ चतुरानन ब्रह्मा वक्तारूप एवं नारदादि मुनिगण श्रोता के रूप में महाराजा तखतसिंह का चरित सुन रहे हैं। जोधपुर नगरी सकलयज्ञ यजनयाजन श्रोत्रियपवित्रीकृत, वाणिक्जनों द्वारा आपणों में क्रय-विक्रयार्थ प्रसारित मणिरजत सुवर्णादि से विभूषित विभिन्न वीथिकाओं वाली, युद्धक्रियाशाली मण्लेडश्वर क्षत्रियों से मण्डित और लोलाक्षि लक्ष्मी लालित सम्पन्नजनालंकृत है। कवि के अभिराम गद्यानुबन्धन की छटा निदर्शन-स्वरूप प्रस्तुत है—

"अयि ! लोलाक्षि लक्ष्मीलालितवपुषः षड्गुणसम्पन्नस्य संपत्सम्पन्नजनपरिपूरितां, श्रीमद्वेदवेदांगसमस्तशास्त्रविद्यापारीणवसुन्धरारांचितां, सकलयज्ञयजनयाजनसमर्थश्रोत्रियपवित्रीकृतां स्वेभ्य विजयेच्छास्वीकृतधनुर्वेदानुसारयुद्धक्रियाशालिमण्डलेश्वरक्षत्रियमण्डलरक्षितां वणिग्जनापणक्रय्यप्रसारितमणिरजतसुवर्णाद्यनेकवस्तुपरिशोभितवीथिकां,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गमनचतुरगजतुरगरथपदातिचतुरङ्गबलसंचारसुविस्तारानेकराजमार्गां, वाः परिपूरितसागरनिभसागरैः संशोभितां, जागरूकानेकसेनानायक सुरक्षितबहिःप्राकारगोपुरां, सकलदेवताधिष्ठितामरीणामयोध्यां योधाभिधानीं राजधानीं पालयतः श्री तगतसिंहनरेन्द्रस्याद्भुतचारित्रमधुना श्रावये ।। शृणु ।। ८ ।।

जहां कवि ने जोधपुर नगरी के वर्णन में विभिन्न अतिशयोक्तिपूर्ण उक्तियों का सहारा लिया है उसी तरह से महाराजा तखतसिंह विषयक अतिरञ्जनागर्भित निरूपण भी साहित्यिक उन्मेष के रूप में ही देखा जा सकता है। तखतसिंह को ब्रह्माण्डनायक, त्रिलोकनायक और राजोत्तमराज कहना कवि की अपनी कल्पना है।

लोकेश ! लोकोत्तमभूमि लोके
देवेश ! देशोत्तम धन्वदेशे।
पुण्येश ! पुर्युत्तमयोधपुर्या-
मास्ते हि राजोत्तमराजराजः ।। ४ ।।

संक्षेप में काव्यगत प्रथमकाण्ड का विषय जोधपुर नगरी का वैभव, वर्णव्यवस्था, वापी, कूप, जलाशय, सुन्दर अट्टालिकायें, भोगीशैलपर्वत का पावनत्व, प्राकार और महाराजा की स्वयम् की सन्तति आदि है जिसके ऐतिह्य का विवेचन शोध का विषय है। यद्यपि महाराजा तखतसिंह के १० औरस पुत्र थे तथापि महाराजा जसवन्तसिंह, जोरावरसिंह, कल्याणसिंह-प्रतापसिंह, रणजित्सिंह एवं केशरीसिंह आदि ६ ही पुत्रों का वर्णन किया है।

काव्य के द्वितीय सर्ग में कवि ने महाराजा तखतसिंह को एक ऐसे स्वरूप में स्थापित किया है जिसकी जानकारी इतिहासकारों को कम है हालांकि नवीन शोधसूत्रों ने इसे पुष्ट किया है। ऐहिक भोगलिप्सा एवं ऐश्वर्यादि को मिथ्या मानकर महाराजा तखतसिंह अपने पुरा एवं भावी वृत विषयक चिन्ता से ग्रसित हैं। इनकी दृष्टि में पुत्र, कलत्र, मित्र, बन्धु, अमात्य, सेना, राज्य, शत्रु एवं अन्यान्य सभी सांसारिक वस्तुयें मिथ्या होने के कारण व्यर्थ हैं—न मालुम पुरा काल में कितनी विभिन्न

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

योनियों में जन्म लेकर सम्प्रति इस देह को प्राप्त किया है जिसके माध्यम से भगवत् प्राप्ति की जा सकती है। इस प्रकार अनेक संकल्पविकल्पादि में निमग्न महाराजा अन्ततोगत्वा पतितपावनी भागीरथी की यात्रा का निश्चयात्मक मानस बनाकर उसे अपने मन्त्रिगणों के सम्मुख अभिव्यक्त करते हैं। किन्तु अमात्यगणों की दृष्टि में एक राजा की गंगा यात्रा उनके अन्यतर भाव का प्रदर्शन है न कि पुण्यार्जन का। वे विनम्रता पूर्वक अपने मत के स्थापनार्थ कहते हैं कि नृपगणों को तो अप्रयत्न से ही दान तीर्थ एवं तपादि का फल सुलभ है बशर्ते कि उनका साध्य न्यायपथप्रवर्तन, सत्य, धर्म, तप एवं दान हो। अमात्यवर्ग की नीतिगर्भित बातें राजा की अहं की तुष्टि में व्यवधानपरक होने से उनकी क्रोधाग्नि को प्रज्वलित करने में सहायक सिद्ध होती है। इसी समय कोपाटोप कषायिताक्ष तखतसिंह के शमनार्थ उपस्थित होते हैं मन्त्रिवर हंसराज जोशी एक पुरावृत्त के साथ जो महाराजा मानसिंह से सम्बन्धित है। एक समय महाराजा मानसिंह भी अपनी प्रजा एवं दुर्गादिसहित विभिन्न 52 नरेशों की सेनाओं से घिर जाने के कारण मानसिक सन्ताप से अभितप्त होकर विचार करते हैं कि उत्तम क्षत्रियकुल में जन्म और राज्यभार का दायित्व देकर भी चतुर्मुख ब्रह्मा प्रतिकूल क्यों है। युद्ध में जयाजय महत्वहीन है किन्तु प्रजापालन के जिस धर्म का मेरे पूर्वजों ने ठीक प्रकार से पालन किया था मैं उससे नितान्त विहीन हो गया हूँ। महाराजा मानसिंह के इस निराशाजनक ऊहापोह का समाधान शंभु द्विज (शंभूराम जोशी) ढूंढ निकालते हैं जो उन्हें जयप्रदा चामुण्डायजन एवं युद्धमख का परामर्श देते हैं। इस यज्ञ में अनार्यसिंह (अनाडसिंह) अध्वर्यु, ज़लन्धर ब्रह्मा एवं स्वयं महाराजा मानसिंह यजमान थे। यज्ञ की परिसमाप्ति पर यजमान को वर मिलता है कि आपको पुरन्दरवत् सुन्दर तगतसिंह नामक कुमाररत्न प्राप्त होगा।

इसके पश्चात् महाराजा मानसिंह ने चिरकाल तक सुख से राज्य किया किन्तु अनपत्यतप्ता राजमहिषियों के प्रलापजन्य सन्ताप से करुणार्द्र होकर उनके समक्ष तगतसिंह वर प्राप्ति का आद्योपान्त वर्णन किया। इस पुरावृत्त के बाद मन्त्रिवर हंसराज निवेदन करते हैं कि

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आपकी नगरी के पूर्व में पुष्करतीर्थ, दक्षिण में द्विरदानन का मन्दिर, पश्चिम में रामभूतेश एवं उत्तर में मण्डलप्रभु हैं अतः आपको गंगा यात्रा की कतई आवश्यकता नहीं है। यद्यपि मन्त्रिवर के वचनों से महाराजा का क्रोध शान्त हो जाता है तथापि गंगा यात्रा की कामना से उनका मानस विमुख नहीं होता है और एतन्निमित व्यवस्थापरक आदेश प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार हाथी, घोड़े, सैनिक, स्त्रीगण, योद्धा, मल्ल, वैतालिक, वंशचारित्रवादि आदि विभिन्न लोगों के साथ महाराजा तखतसिंह ने संवत् १६११ में फाल्गुन वदी सप्तमी को गंगायात्रा निमित्त जोधपुर से प्रस्थान किया। महाराजा का पहला बड़ा पड़ाव महाराजा रामसिंह शासित जयपुर नगरी में हुआ जहां उनका भव्य स्वागत किया गया। स्वागत समारोह का आयोजन इतना भव्य है कि उसके द्रष्टा के रूप में विमानस्थ पुरन्दरादि गण सुराङ्गनाओं के साथ मौजूद हैं। महाराजा रामसिंह एवं महाराजा तखतसिंह की सेनाओं द्वारा पारस्परिक मैत्रीरूपेण तोपोद्घोष किया जाता है। इसके पश्चात् सवसे पहले वाद्य-मृदङ्ग, दुन्दुभि वादक आदि एक पंक्ति में तथा द्वितीय पंक्ति के पदाति, राजप्रधान, तुरगपंक्ति, वारांगना, योगि, राजकुमार आदि के निष्क्रमणोपरान्त भेरी मृदङ्ग दुन्दुभि एवं प्रजाजनों के जयजयकार के मध्य महाराजा रामसिंह एवं तखतसिंह का स्नेहमिलन सम्पन्न होता है।

जयपुरनरेश के आतिथ्योपरान्त महाराजा सपरिवार दल-बल सहित इन्द्रप्रस्थ नगरी हेतु प्रस्थान करते हैं। इससे पूर्व आवश्यक व्यवस्था हेतु शिवनारायण नामक मन्त्री को हरिद्वार प्रेषित किया जाता है। हरिद्वार में महाराजा ने देवर्षि पितृगणों के तर्पणोपरान्त सहस्रों द्विजों को दान देकर सम्मानित किया और भागीरथीदशक नामक स्तोत्र का प्रणयन भी किया। हरिद्वार यात्रा के समापन से पूर्व पण्डित मण्डली द्वारा शास्त्रार्थ का आयोजन किया गया जिसमें स्वयम् महाराजा ने शास्त्रार्थ चर्चा में सक्रिय रूप से भाग लिया। सभा पण्डितों का एक वर्ग माया सिद्धान्त का वर्चस्व द्योतित कर रहा था तो दूसरे वर्ग ने ब्रह्म-सिद्धान्त के उत्कर्ष का प्रतिपादन किया। स्वत्वसिद्धान्त पोषणोपरान्त भी जव कोई निष्कर्ष नहीं निकला तो महाराजा की आज्ञा से शंकर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

और केशव नामक दो विद्वानों ने बड़ी ही कुशलता से दोनों वर्गों का शंका समाधान करते हुये अद्वैतमत का विशदरूपेण प्रतिपादन किया। आगे के प्रकरण का विषय महाराजा की मथुरा यात्रा एवं कुछ अवधि तक वहां विश्राम का प्रतिपादन है।

काव्य का चतुर्थ काण्ड बहुत ही संक्षिप्त है। यहां कुछ पद्यों में मथुरा नगरी का गौरवगान और श्रीकृष्णस्तुति के पश्चात् काण्ड का समापन हो जाता है।

काव्य के पञ्चम काण्ड का विषय महाराजा की पुष्करयात्रा एवं वापसी से सम्बन्धित है। पुष्कर तीर्थ में महाराजा ने ब्राह्मणों एवं याचकों को भोजन एवं मनवाञ्छित दान देकर तृप्त किया। यहां महाराजा ने ब्रह्मपुष्करस्तोत्र का प्रणयन कर ब्रह्मा के साथ-साथ तीर्थराज पुष्कर की भी महिमा का बखान किया। इसके पश्चात् महाराजा ने जोधपुरं नगरी की ओर प्रस्थान करने का आदेश प्रदान किया।

काव्य के षष्ठ एवं अन्तिम सर्ग में जोधपुर नगरी में जो महाराजा का स्वागत-सत्कार किया गया उसका अत्यन्त ही अतिशयोक्तिपूर्ण एवम् ललित निरूपण है। इसके अतिरिक्त महाराजा ने जब जोधपुर नगरी में प्रवेश किया तब नक्षत्रों की स्थिति के बारें में काव्य में रोचक निरूपण है, उसके दो तीन पद्य प्रस्तुत हैं।

युवत्यश्च युवानश्च बालवृद्धाः स्वलंकृताः।
स्वपुरीनायकं द्रष्टुं स्थिताः सौधेषु पंक्तितः ॥ २९७ ॥

यथा चन्द्रचकोरा वै कामिन्यः कामुकानिव।
प्रभवे वत्सरे मासे शुचौ पक्षेऽर्जुने दिने ॥ २९८ ॥

पंचमे गौरवे वारे चोत्तरायां शुभे धनौ।
कुलीरस्थे सहस्रांशौ हिमांशौ तु मृगेन्द्रगे ॥ २९९ ॥

जीवे कलरागे चोक्षिण स्थिते सौरौ सति प्रिये।
शुभस्थानेषु शेषेषु खेचरेषु सुसत्सु वै।
तख्तसिंहमहीपालः प्रविवेश निजे: पुरे ॥ ३०० ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स्नेह-मिलन एवं स्वागतादि समारोहों के बाद महाराजा ने अपनी यात्रा के बारे में एक संक्षिप्त विवरण अपने मन्त्रिमण्डल के समक्ष रखा। इस विवरण में महाराजा की किशनगढ़ यात्रा का भी विवरण है हालांकि काव्य में यह वर्णित नहीं है।

साहित्यिक दृष्टि से इस काव्य का महत्व सर्व-जन-संवेद्य है। स्वयं कवि की दृष्टि में यह गद्यपद्यानुबन्ध बसन्तकालीन कोकिला के कण्ठ-रव के समान माधुर्य एवं रस से ओतप्रोत है--

गद्यानुवद्धरसमिश्रितपद्यसूक्ति-
र्वासन्तिकीव मदकोकिलकण्ठवाणी।
केषां विशेषविदुषां न करोति मोद-
माराजहंसगुणवर्णनशेषसत्ता ।। २ ।।

कृतित्व का आकलन एवं समालोचन विद्वज्जनों का विषय है, फिर भी गद्यपद्यानुबन्धन के साथ जहां इतिहास के संयोजन का प्रश्न है कवि को इसमें पूर्ण सफलता मिली है। काव्य का मुख्य प्रयोजन तत्कालीन जोधपुर नरेश तखतसिंह की गंगा यात्रा का चित्रण है जो संवत् १६११ की फाल्गुन वदि ७ को प्रारम्भ होकर संवत् १६१२ द्वितीय आषाढ सुदि ४ को वापस जोधपुर लौटने पर सम्पन्न हुई थी। तखतविलास चम्पू में भी गंगा यात्रा की तिथि निम्न प्रकार से वर्णित है जो पूर्णतया इतिहाससिद्ध है।

राजचन्द्रनिधिक्षोणीवत्सरे फाल्गुनेर्जु ने।
पक्षेऽब्धि दिवसे भूजे राजा तीर्थाय निर्ययो ।। १२१ ।।

महाराजा की गंगा यात्रा के बारे में मेहरानगढ़स्थित पुस्तक प्रकाशित में रिकार्ड उपलब्ध है जिसके अन्तर्गत महाराजा ने जोधपुर से प्रस्थान कर जयपुर, दिल्ली मार्ग से हरिद्वार तथा वापसी में मथुरा, कामा, डीग, किशनगढ़ एवं पुष्कर होते हुये यात्रा सम्पन्न की थी।

गंगायात्रा के अलावा इस काव्य में प्रकारान्तर से तखतसिंह के पुत्रों, विभिन्न मन्त्रियों एवं मानसिंह कालीन कतिपय ऐतिहासिक घट-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नाओं का उल्लेख है जो पूर्णतया इतिहास सम्मत है।

मारवाड़ के शासकों के साहित्यिक अवदान की जब चर्चा होती है तो स्मरण आता है, महाराजा अजीतसिंह से सम्बन्धित 'अजीतोदय' नामक महाकाव्य की रचना भट्टजगजीवन ने की जिसमें मण्डोर के बगीचों का सौन्दर्य, जोधपुर नगरी का वर्णन, जन्म, मृत्यु विवाहादि विषयों के अलावा मुगल मारवाड़ सम्बन्ध तथा मारवाड़ की कई ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन है। इसके बाद दीक्षित बालकृष्ण ने 'अजीत चरित्र' नामक काव्य की रचना की। महाराजा अभयसिंह के काल में (१७२४-१७४९) 'अभयोदय' काव्य लिखा गया। भट्ट हरिवंश का भी जिक्र आता है जिन्होंने महाराजा भीमसिंह की प्रशंसा में (१७९३-१८०३) 'भीमप्रबन्ध' नामक काव्य रचा। महाराजा मानसिंह के काल में मानसिंह प्रशस्ति एवं मानभास्करोदय चम्पू लिखे गये। अतिरिक्त उस काल में प्रचुर मात्रा में हिन्दी साहित्य की भी रचना की गई।

यह अत्यन्त ही दुःख का विषय है कि महाराजा मानसिंह के दत्तक पुत्र महाराजा तखतसिंह के साहित्यिक अवदान को इतिहासकारों व साहित्यकारों ने सही परिप्रेक्ष्य में अभी तक नहीं देखा है। हाल ही में महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश से "तखतराज पदावली" अभिधान से एक पुस्तक प्रकाशित की गई है। उक्त पदावली में यह पहली बार रहस्योद्घाटित किया है कि महाराजा तखतसिंह स्वयम् कवि होने के अलावा संगीतज्ञ भी थे। सम्पादक को राम एवं कृष्णभक्ति विषयक करीबन 150 विभिन्न रागबद्ध पद्य मिले हैं जिनके ताल-विधान के अवलोकन से पता चलता है कि ये रचनायें अवश्य ही विलम्बित खयाल अथवा ध्रुपद के रूप में गायी जाती रही होंगी। इन सभी रचनाओं में कवि का नामोल्लेख अन्त में किया गया है। इसके अलावा इन पदों में जगह-जगह 'श्री जी री बणावट' या 'श्री हजूर सायबा री बणावट रा ख्याल टप्पा' नाम से उल्लेख मिलता है। कुछ स्थलों पर तखतसिंह विरचित होरियों एवं दादरों की भी सूची दी गई है। अतः यह कहा जा सकता है कि ये पद अवश्य ही महाराजा तखतसिंह ने लिखे हैं। तखत-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राज पदावली में एक और सन्दर्भ दिया गया है जिसमें भगत कनीराम द्वारा महाराजा को तानपुरा नजर किये जाने का उल्लेख है। विद्वान् सम्पादक के मत में तानपुरा सामान्यतः गायक को ही नजर किया जाता है अतः तखतसिंह के संगीतज्ञ होने का भी इससे अनुमान होता है। तखतविलास चम्पू में शेष कवि ने महाराजा तखतसिंह को भागीरथी-दशक एवं ब्रह्मपुष्करस्तोत्र के प्रणेता के रूप में चित्रित किया है जिससे विदित होता है कि महाराजा स्वयम् कवि होने के साथ-साथ संस्कृत भाषा के भी जानकार थे। भागीरथीदशक एवं ब्रह्म-पुष्करस्तोत्र के विषय में तखतविलास चम्पू में निम्न विवरण उपलब्ध है।

श्रीतक्तसिंहरचितं शुभदं च नित्यं
भागीरथीदशकमाशु पठन्ति ये ते।
आनप्तृपुत्रसहिताः सकलानभीष्टान्
भुक्त्वा हरिं समनुयान्ति न यान्ति सर्गम् ।। २०५ ।।

अधनान् सधनान् चक्रे सधनानधनान् तथा।
ब्रह्मपुष्करयोः स्तोत्रं ततश्चक्रे नृपोत्तमः ।। २८२ ।।

शेष कवि का यह प्रतिपादन महाराजा तखतसिंह को संस्कृत कवियों की पंक्ति में लाकर खड़ा कर देता है। लेकिन इसे अकाट्य प्रमाण के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। हो सकता है कि महाराजा तखतसिंह ने अपना कवित्व भाषा में प्रस्तुत किया हो जिसे शेष कवि ने संस्कृत भाषा में रूपान्तरित किया हो। इस तरह की किसी अन्य संभावना से भी इन्कार नहीं किया जा सकता। हाँ, इतना अवश्य स्पष्ट होता है कि महाराजा तखतसिंह निश्चित रूप से एक सहृदय कवि एवं उदारचेता शासक थे। इनकी शास्त्र एवं शास्त्रज्ञ के प्रति पूरी श्रद्धा थी।

काव्य के प्रणेता शेष कवि गौतमीतट के निकट सिद्धान्तपुर के निवासी थे और इन्होने मारमण नामक अपने साथी के साथ काफी समय वाराणसीश की सेवा में व्यतीत कर उन्हीं की आज्ञा से चिरकाल तक जोधपुर निवास किया था—ऐसा काव्य के अन्तिमांश को देखने से ज्ञात होता है। तखतविलास चम्पू के समापन-पद्यों में एक स्थल पर कवि ने मात्र अपना नाम कर्त्ता के रूप में प्रतिपादित किया है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

समाप्तः सम्पदायुक्तो नृपनाम्ना तु विश्रुतः ।
शेषप्रणीत आभूमेः प्रवन्धो विजयत्यलम् ।। ३२६ ।।

कवि का परिचय काफी प्रयासों के अनन्तर भी इतना ही उपलब्ध होने के कारण उसे भावी शोधार्थियों के अन्वेषण के लिये छोड़ना पड़ रहा है । पूर्व में स्पष्ट किया जा चुका है कि महाराजा तखतसिंह की गंगा यात्रा का समापन संवत् १९१२ में हुआ था । तखतविलासचम्पू का समापन भी संवत् १९१२ में हुआ था । एतद्विषयक श्लोक द्रष्टव्य है ।

करभूमिनवक्षोणी वर्षे मासि धनौ सिते
पक्षे पञ्चमघस्रे तु भार्गवस्य दिने शुभे ।। ३२८ ।।

प्रति का अन्तस्साक्ष्य इस अनुमान को बल देता है कि शेष कवि सम्भवतः महाराजा की गंगा यात्रा में उनके साथ थे अन्यथा महाराजा की गंगायात्रा के समापन समय में ही काव्य का सम्पन्न होना सम्भव प्रतीत नहीं होता है । इतना अवश्य निश्चित है कि शेष कवि महाराजा तखतसिंह के समकालीन कवि थे । जो भी हो इतना निश्चित है कि शेष कवि उस काल विशेष में महाराजा तखतसिंह के काफी निकट रहे हैं ।

काव्य के सूक्ष्मावलोकन से विदित होता है कि तखतविलासचम्पू के लेखन का मूल प्रयोजन महाराजा की (संवत् १९११-१२ में सम्पन्न) गंगा यात्रा का निरूपण है । यही कारण है कि इस काव्य में इस काल से पूर्व एवं पश्चाद्वर्ती किसी घटना का जिक्र नहीं हैं । उदाहरणार्थ नाथों का उपद्रव, डूंगर जवार नामक डकैतों का उपद्रव तथा महाराजा तखतसिंह की कन्या का विवाह आदि घटनायें संवत् १९११ से पूर्व अथवा बाद की है और उनका इस काव्य में जिक्र नहीं है । इसी तरह से गूलर आदि के ठाकुरों की बगावत, जोधपुर के किले पर बिजली गिरना एवं चामुण्डा के मन्दिर का ध्वज गिर जाना, आदि और भी कई घटनायें हैं जिनका इस काव्य में वर्णन नहीं है क्योंकि ये घटनायें वि. संवत् १९१२ के पश्चात् की हैं ।

इन सब बातों पर यदि आज का पाठक विचार करें तो सहज ही

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एक प्रश्न उसके सामने ग्राता है कि तखतसिंह की गंगायात्रा क्या इतनी लोकाभिमुख थी, क्या वे स्वयं इतने जन-संवेदनशील थे कि उनके जीवन के केवल एक प्रसंग को लेकर ही जोधपुर में रहने वाले किसी कवि की वाणी मुखरित हुई हो ? तखतसिंह से पहले भी राव सीहा ने गया-यात्रा की थी, मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह ने काशी-यात्रा की थो ग्रौर भी न जाने कितने शासकों ने कितनी तीर्थयात्राएँ की थी । राजाग्रों पर लिखे प्रशस्ति काव्यों की जहाँ एक ग्रोर भरमार है, वहाँ इस प्रकार घटना-विशेष का बखान करने में प्रवृत्त हुए कवियों के उदाहरण नितान्त विरले हैं । तखतसिंह का काल वर्तमान नहीं तो वर्तमान का प्रारम्भ तो है ही । यह समय ऐसा है जिसमें ग्रराजक राजतंत्र का झुकाव जन-कल्याण की ग्रोर होने लगा था । वहुत सम्भव है जैसे महाराजाग्रों की कन्या के विवाह के साथ-साथ ग्रन्य कई कन्याग्रों का विवाह रचाया जाता था, उसी तरह महाराजा की तीर्थयात्रा में ग्रनेक लोगों को सहभागी होने का ग्रवसर दिया होगा—उसी ग्रौदार्य का प्रतिमान इस काव्यरूप में ग्रनुभव किया जा सकता है । हो, न हों, कई ऐसे काव्य लिखे गये हों, परन्तु भविष्य में उपलब्ध होने वाले ऐसे काव्यों की उपलब्धि का सूत्र-पात निश्चय ही इस चम्पू से माना जाना चाहिये ।

ग्रोम प्रकाश शर्मा
डॉ. गोविन्दराम चरौरा

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

॥ श्रीः ॥

तत्त्वतविलासचम्पू

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीदेव्यै नमः ॥

आर्यां नमामि वनजायतलोचनाढ्या-
मामौक्तहारपरिशोभितकम्बुकण्ठीम् ।
मत्तेभकुम्भविजयिस्तनभारनम्रां
मञ्जीरसिंजितमनोहरपादयुग्माम् ॥ १ ॥

गद्यानुबद्धरसमिश्रितपद्यसूक्ति-
र्वासन्तिकीव मदकोकिलकण्ठवाणी ।
केषां विशेषविदुषां न करोति मोद-
माराजहंसगुणवर्णनशेषसत्ता ॥ २ ॥

श्रीनारदादिमुनयो विनयेन युक्ता
ब्रह्माणमूचुरखिलं निखिलाधिनाथम् ।
भूलोकलोकचरितं सदसि प्रवीणाः
वीणाप्रवीणरचनादरपाणिवाणिम् ॥ ३ ॥

लोकेश ! लोकोत्तमभूमिलोके
देवेश ! देशोत्तमधन्वदेशे ।
पुण्येश ! पुर्युत्तमयोधपुर्या-
मास्ते हि राजोत्तमराजराजः ॥ ४ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कथालोभेषु भक्तेषु दयां कुरु दयानिधे !
एतद्राजकथां ब्रूहि कौतूहलकरीं हि नः ।। ५ ।।
वाणी पाणितले न्यस्य पादयोः पतिमब्रवीत् ।
राजरत्नकथाप्रश्न मौनिभ्यो ब्रूहि विस्तरम् ।। ६ ।।

वाणीं पुरोधाय महाप्रसिद्धै-
वंक्त्रैश्चतुर्भिश्चतुराननोपि ।
वक्तुं मुनीन्वै वचनं प्रचक्रे
विश्वस्य वाक्यं मुनिमण्डलस्य ।। ७ ।।

अयि ! लोलाक्षिलक्ष्मीलालितवपुषः षड्गुणसम्पन्नस्य संपत्संपन्न-जनपरिपूरितां, श्रीमद्वेदवेदांगसमस्तशास्त्रविद्यापारीणवसुन्धराममरांचितां, सकलयज्ञयजनयाजनसमर्थश्रोत्रियपवित्रीकृतां, स्वेस्यविजयेच्छास्वीकृतधनुर्वेदानुसारयुद्धक्रियाशालिमण्डलेश्वरक्षत्रियमण्डलरक्षितां, वणिग्जनापणक्रय्यप्रसारितमणिरजतसुवर्णाद्यनेकवस्तुपरिशोभितवीथिकां, गमनचतुरगजतुरगरथपदातिचतुरङ्गबलसंचारसुविस्तारानेकराजमार्गां, वाःपरिपूरितसागरनिभसागरैः संशोभितां, जागरूकानेकसेनानायक-सुरक्षितबहिःप्राकारगोपुरां, सकलदेवताधिष्ठितामरीणामयोध्यां, योधा-भिधानराजधानीं पालयतः श्रीतगतसिंहनरेन्द्रस्याद्भुतचारित्र(त्र्य)मधुना श्रावये । शृणु ।। ८ ।।

जन्मान्तरेषु मुनिमण्डलमध्यगोसौ
ब्रह्माण्डनायकमखण्डितरूपमेकम् ।
श्रीचन्द्रमौलिममलैः कठिनैस्तपोभिः
[1]आराधयत् स बहुभिर्विजितेन्द्रियो वै ।। ९ ।।

स्फटिकमणिनिभाभं पार्वतीभूषिताङ्गं
विरचितपरिभोगं व्याघ्रचर्मोत्तरीयम् ।
दिनकरशशिनेत्रं योगिहृद्ध्यानगम्यं
शिरसि निहितगङ्गं पूजितं दिव्यलिङ्गम् ।। १० ।।

---

१ मूले आराधयन्तु इति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तदन्वनेकजन्मार्जिततपोराशिवशीकृतदेवतावृन्दस्य, प्राप्तकैलासवासस्य, त्रिलोकनायकस्येश्वरस्य, त्रिलोकामात्यत्वं गृहीत्वेव मर्त्यलोकावतीर्णस्य, चतुर्युगचतुर्वर्णचतुराश्रमचतुर्वेदधर्मप्रवर्त्तकचतुरस्य, रणगणजितारिगणमणिमुकुटकोटिसंघर्षणारुणितचरणाग्रस्य, आहवेऽनिमिषैरप्यनुमीयमानाशक्यशरसंधानलघुतरबाहुयुगस्य, दुरवगाहमहारण्यान्तर्गतगुहानिलयोग्रसिंहव्याघ्राद्यनेकमृगनिग्रहसमर्थंमृगयायात्रस्य, तत्र तत्र क्षेत्र[1] गृहारपवित्रीकृतदेवमातृकमरुदेशस्यापि वेदशास्त्रार्थपरिज्ञातृश्रोत्रियविप्रपादोदकदानाम्बुप्रवाहनदीनदीमातृकधन्वदेशस्य, सकलप्रजाभाग्यस्य महाराजराजस्य श्रीतगतसिंहमहीपालस्य भाग्यमाकर्ण्यताम् ।। १२ ।।

भोगिशैलात्परो नास्ति पर्वतेषु महीतले ।
यज्ञदानैः परां तृप्ति यत्र यान्ति सुराः द्विजाः ।। १३ ।।

यत्र तिस्रः प्रवर्त्तन्ते श्रीवाग्दुर्गाः सुपूजिताः ।
यत्र वीरपदं प्राप्य यान्ति वीरपदं पराः ।। १४ ।।

मे वाणीं शृणुवाण्यहो पर्वतस्यास्य भाग्यता, साश्वसारथ्यायुधानेकरथिभिः सुरक्षितद्वारगोपुरैः परिवृतप्रथमकक्षे, तदनुकुन्दकुटजलिकुचतक्कोललवंगकेतकीकदम्बौदुम्बरकपित्थाश्वत्थनागपुन्नागतालहिन्तालत - मालबकुलतिलकामलककुरवकमरुवकमाकन्दतिन्दुकचांपेयचन्दनस्यन्दन - चंपकपनसवेतसपलाशपारिजातपाटलीनारङ्गरंभानारिकेलजम्बीरजम्बू - दाडिमीप्रमुखपुष्पफलभारनम्राग्रभूरुहसमन्वितोद्यानवनान्तर्गतक्रीडागारैः परिवृते, मदधारास्वादनमत्तचित्तद्विरेफालंकृतगण्डमहागजसंकुलनिरुद्धमार्गद्वितीयकक्षे, गमनचतुरतुरगारूढभुजविलसत्सितासितेजःप्रसारस्खलितशत्रुसारद्वारावृततृतीयकक्षे, द्वात्रिंशदायुधालंकृतद्वारपदोस्तलार्द्ध - चन्द्राङ्कितापरिचितजनविरचितविज्ञापनप्रापकजनगमनागमनधावनजातस्वेदोदककर्दमानुलिप्ततुर्यकक्षे, पंचयोजनलक्ष्यैकचक्षुर्जनपालितगोलास्याग्निकर्णशतघ्नीशतसहस्रान्वितकूटागारपरिवृते महाराजभवने ।। १५ ।।

सौधो विभाति पुरतः सुतोरणसमावृतः ।
धराधरपदोयं वै धाराधरसुमूर्द्धकः ।। १६ ।।

---

१ क्षेत्रा

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सुवर्णकलशैस्स्तंभैर्जाम्बूनदमयैस्तथा ।
रत्नवातायनैर्दिव्यैः स्फाटिकाभिः सुभित्तिभिः ।। १७ ।।

नानाभोगैः सुसंवृत्तो वितानैर्मौक्तिकैः शुभैः ।
मेरुमन्दरकैलासैः समतां याति[1] सम्पदा ।। १८ ।।

तदनन्तरमणूनामपि गणनायां निपुणधिषणमंत्रिनिमन्त्रितसुत्रामपत्र-गात्रवदच्छाच्छस्फटिकनिबद्धगोत्रातलविस्तीर्णराजकंबलनिषण्णगात्रकण्ठ-रवमुखरितदिगष्टकायां, स्फुरत्सुधाकरप्रस्तरविस्तारचतुराशाविरचित-भित्तिप्रतिबिम्बितहेमस्तम्भसहस्रैः रम्भोर्वशीतिलोत्तमोपमितवाराङ्ग-नाशतेन, समस्तालंकारालंकृतव्यापारचतुरप्रधानाष्टकेन हर्यक्षसमबलसा-युधयूथपशतेन च परस्परावलोकितोपसभायां पटलाटनपंजरगतशुकपिक-कुरवकभ्रमरमयूरमंजुरवगरीयो रमारमणकुमारमारसंचारमनोरमरूप-जीविकागानवीणारवव्यापारैर्विद्वज्जनकृताशीः पूर्वकसमाम्नायरवैश्च प्रति-नादितायां राजसभायां, वज्रवैडूर्यगोमेधपुष्परागमाणिक्यमुक्ताप्रवालेन्द्र-नीलस्फटिकसुवर्णखचिते नानाविचित्रकौशेयनिर्मितमौक्तिकचैलांचितवस्त्रा-लंकृतमध्यके, नानारंजितपटवितानविस्तारे सुवर्णश्रृंखलाकीलितस्फटिक-मयदीपिकाकलशतेजः प्रसारदूरीकृततमःपुंजे, सकलजनवन्दिते विजयदे महासिंहासने ।। १९ ।।

आभाति चन्द्रमुखवारवधूकराग्र-
व्याधूतचामररुच्चलितोत्तरीयः ।
सूर्येन्दुवह्निमहसामिव राशिरूपः
सिंहासने हि नरनायकतख्तसिंहः ।। २० ।।

नालीकभङ्गकृदतीव न दीनबन्धु-
र्नक्षत्रयो न वसुधाविभवैकहेतुः ।
राजा किमिन्दुरपि नार्य्यभिमानहारी
राजा परं तगतसिंहनरेन्द्रवर्यः ।। २१ ।।

---

१ मूले यान्तीति

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

संग्रामकेलिपरिघट्टितबाहुमूलो
वाजिप्रनर्त्तनविधौ नकुलोऽसि राजन् ।
तूणीरचापकवचासिसुचक्रधारिन्
आजौ चिराय सुरराज इव प्रभुंक्ष्व ॥ २२ ॥

राजन् ! त्वद्रतिसंगरे सुमशरो पारं न यातः परं
रम्भोरुप्रवणायुते कटितटे नाभिप्रवापीयुते ।
रत्नप्रस्तरसंयुते कुचगिरौ योषिल्लतासुस्थले
तुण्डेन्दुप्रतिमेडिते च कवरीमत्तेभभारान्विते ॥ २३ ॥

त्वत्कीर्तिर्जनपीडितां प्रथमजां लक्ष्मीं विजेतुं रुषा
कैलासं सहसा निनाय विफला पश्चाद्रमानायकम् ।
नीत्वा तत्र तथैवमाद्यपुरुषं भग्नोद्यमं वीक्ष्य तां
पश्चात्तत्पितरि स्थिते च वडवे निक्षिप्य तीरे स्थिता ॥ २४ ॥

एवं प्रभूतैश्वर्यस्य वीर्येण विष्णुना भासाभास्वता प्रियदर्शनेन सुधाकरेण क्रोधेन प्रलयानलेन क्षमयाक्ष्मया त्यागेन धनदेन सत्येन धर्मेण संपदा सुयोधनेन तपसा दशरथेन समस्य वामगात्रमाल्यालंकृतसुकलत्रेशकलत्रनेत्रकृपापात्रस्य, सकलराजमंत्रसरोराजहंसहंसराजप्रधानस्य, सकलनीतिमार्गोपदेशदेशिकायमानवाचस्पतिसमप्रभुप्रकाशमानस्य चतुर्दशभुवनसर्गस्थितिलयकारिणीमेकामजां त्रिलोकसुन्दरीं केशकेशवादिपूजितचरणयुगलां भगवतीं दुर्गां सुवर्णकमलमल्लिकाबिल्वप्रवालतुलसीचंपकादिनानाविधफलपुष्पगन्धधूपदीपनैवेद्यादिषोडशोपचारैश्च प्रत्यहं प्रीणयतो महाराजराजस्य श्रीतगतसिंहकुंभिणीनायकस्य सन्निधौ स्वधर्मान्परिशोधयितुमिवैतद्राजधर्मदारेष्विन्द्रादिदिग्पालकाः पुत्रत्वेनाविर्बभूवुः ॥ २४ ॥

यशोवन्तसिंहं सदालोकपालं
कलाकेलिलोलं कुलापारमूलम् ।
गुणारामजालं रमापालशीलं
सदा पश्य वाणि ! त्वदाकारबालम् ॥ २५ ॥

ज्योतिषा राज्यशत्रोर्वै वह्निरेव रमापतिः ।
ज्योरावरेति कल्याणः सिंहोत्तरपदो भवेत् ॥ २६ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भव प्रजासु रतिमान्तापसेषु पशुष्वपि ।
सिंहतुल्यो मृगग्रामे सिंहोत्तरप्रताप ! भो ।। २७ ।।

रणे जित्वा परान् राज्यं परेषां पालयस्व भो ।
सिंहानन ! सभायां वै रणजित्सिंहनामक ।। २८ ।।

पुष्पेश रूपममलेषु विशेषविद्यं
साध्यं सदा न समरेषु महारिपूणाम् ।
पित्रोः प्रियं च मधुरां गिरमागदन्तं
पश्यन्तु धीरमनुकेशरीसिंहबालम् ।। २६ ।।

शरच्चन्द्रवक्त्रौ समाश्रोत्रनेत्रौ
सुवर्णाभगात्रौ रसापालपुत्रौ ।
रमालोकपात्रौ सुनाम्ना विचित्रौ
भवेतान्तरां त्रायतामीश एतौ ।। ३० ।।

एतद्धर्माङ्गनाङ्गसंभूतास्संभूतशौर्यराशिप्रकाशमानाः, प्रकाशमान-सर्वाङ्गास्सर्वाङ्गाभूषितभूषणाभूषणविसरौजः प्रकाशितसभास्सभामोदित-नीतिवार्ता वार्त्तामात्रापादनप्रभीतशत्रवश्शत्रुमित्रसमधानमनीषा मनीषा-वाक्कायपूजितपितरः पितृतुल्यबाहुपराक्रमाः, पराक्रमपाल्यमानपरदेशाः परदेशान्तनीतयशोनिवहाः यशोनिवहाहूतविद्वज्जना विद्वज्जनसंधारण-नीयमानकालाः, कालदण्डसमदण्डाश्चण्डकोदण्डपण्डिताः कुमार इव वीरा माकुमार इव सुकुमाराः कुमाराः प्रादुर्बभूवुः ।।

श्रीतक्तचम्पूललितप्रबन्धे
नवे सुगंभीरपदानुयुक्ते ।
काण्डोयमाद्यः किल काण्डकल्पो
युतः सधर्मैरभजत्समाप्तिम् ।। १ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीय काण्ड

एवं पुत्रैश्च मित्रैश्च बन्धुभिश्च विशेषतः ।
अमात्यैः कुशलै[1]र्बाणैस्सेनाभिश्च सहस्रशः ।। ३० ।।

धनैश्च बहुभिः पात्रदानैश्च विविधैः परैः ।
राज्यैरप्रतिहतैवँ शत्रुशान्तिकपूर्वकैः ।। ३१ ।।

सतीकल्पसतीतल्पैः शीलवृत्तमनोरमैः ।
विद्वद्भिः सकलज्ञैश्च वीरैश्च हरिदर्पणैः ।। ३२ ।।

अन्यैश्च विविधैर्भाग्यैर्युक्तोपि भगवान्नृपः ।
सर्वं मिथ्येति मत्वैवं चिन्तयामास मानसे ।। ३३ ।।

क्व कोऽभवमहं पूर्वं कर्म किं कृतवानहम् ।
परिवारोपि कोऽभून्मे संसारे परिवर्त्तिनि ।। ३४ ।।

शत्रुमित्रे त्वभूतां कौ पुत्रदारादिबन्धवः ।
के कौ बभूवतुस्तौ मे पितरौ पुण्यधर्मिणौ ।। ३५ ।।

कति जन्मानि जातानि भवेयुः कति वा मम ।
जन्मस्वस्मिंश्च सर्वेषु राज्यमोहे प्रवर्त्तितः ।। ३६ ।।

नापश्यं शाश्वतं किंचित्पदं भगवतो बिना ।। ३७ ।।

इत्थं सरागोपि संजातविरागो महेन्दिरानन्दसन्दोहपदारविन्दमकरन्दधुनी गमनाधानकर्मणि चेतो वेदिजात जातवेदस्यन्तरायमानकामाद्यन्तः प्रत्यर्थिरूपाज्यं प्रायश्चित्यै संहुत्पतदन्वरमवजिगमिषुरनवसरोपि

---

१ मूले तु वाणि इति

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सभायां स्वयमासीनस्स्वविषयवासिवासवसमवंशजभूपालैः करिष्यमाण कृत्याकृत्यानल्पात्यल्परचना सुरुचिरमनीषामात्यैः सकलसांगाम्नायपारावारपारंगतगुरुप्रमुखरत्नगर्भासुरैश्चानेकजन्मार्जितहेमहरणादिमहादुरिताटवीलवनकुठारायमानजाह्नवीकमलापारकमलांदिदृक्षुणा मया यदालोचितं तदेव निश्चीयतामिति सर्वैः समालोच्यान्तःपुरं प्रविश्य सकुटुम्बिना मया शंतनुनृपाङ्गनायात्रामात्रा त्वया सह निश्चितेति प्रतिमात्रावेद्योपान्त्योद्यानकेलिकासदनसौधचंद्रोपलरचितचंद्रशालागवाक्षंप्रविष्ट चन्द्रिकाकलितवातपोतशैत्यसौरभ्यमांद्यमदसमृद्धः सुन्दरीभिर्गमयामास यामिनीं कामिनीमिव ।। ३८ ।।

प्रातः प्रयाणमनसा सहसा सभायां
संविश्य मंत्रिनृपमित्रसुयोधकांश्च ।
ऊचें कुचेलसुतधारिकलत्रयात्रां
यातुं यतध्वमिति वाचमगूढभावाम् ।। ३९ ।।

श्रुत्वा वाक्यं नरेन्द्रस्य श्लाघ्यं गांभीर्यसंयुतम् ।
सुहृदः क्षत्रिया ऊचुः नीतिमार्गरतानृपम् ।। ४० ।।

राजेन्द्र ! सर्वधर्मज्ञ ! नृपमण्डलमण्डितः ।
अस्माभिः प्रार्थितं यच्च तच्छृणुष्व महामते ।। ४१ ।।

राजानो लोकविख्याताः प्रायशो विष्णुरूपिणः ।
तेषामन्यतरोभावः प्रागभावप्रदर्शकः ।। ४२ ।।

बाला इव विराजन्ते कुपालाः प्रायशो भुवि ।
समाधातुं समर्थाः के वाक्यपालनतत्परान् ।। ४३ ।।

तथापि भणितं यच्च तत्कुरुष्व विशेषतः ।
एकत्रवासिनां राज्ञां न्यायंमार्गप्रवर्त्तिनाम् ।। ४४ ।।

अप्रयत्नेन लभ्यन्ते दानं तीर्थं तपो यशः ।
नारिकेला यथा क्षारतो येन सुविवर्द्धिताः ।।
दीयतेऽमृतकल्पं तैः फलं तोयं नृणां सदा ।। ४५ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तथा भगवती दुर्गा गुणलोभैकमानसा ।
किं न यच्छति भक्तेभ्यो माता पुत्रानिवौरसान् ।। ४६ ।।

नृपाणां हि परो धर्मो सत्यतः परिपालनम् ।
सत्यं धर्मस्तपः सत्य सत्यं दानं च तीर्थकम् ।। ४७ ।।

न सत्यात्परमो धर्मः सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ।
तृप्तिं करोति किं गंगा पुण्या पीयूषपायिनम् ।। ४८ ।।

रतितृप्तेन पुंसा तु रमणी रमते कथम् ।
तस्मात्सकलकल्याणभाजनस्य तव प्रभो ।। ४९ ।।

गङ्गादिफलदान्धर्मान्कुर्वतः प्रत्यहं नृपः ।
हृत्कंजवासिनीं गङ्गां सेवस्व कुलवर्द्धक ! ।। ५० ।।

एवं तद्वचनं निशम्य कुलराट् श्रीतर्ख्तसिंहप्रभुः
कोपाटोपकषायिताक्षकिरणैः संवीक्ष्य तान् क्षत्रियान् ।
मानी क्षत्रियवंशजः प्रथमतो ब्रूयान्न वै मानसं
ब्रूयाच्चेत्तु कुतूहलेन मनसा कार्यं सदोवाच तत् ।। ५१ ।।

एवं नृपवचनचकितसभायां दिनमणिकुलभूषणनृपनन्दनन्दनमादेष्टु-मिव समन्दं प्रवदन् सकलराजमन्त्रविचारदक्षमन्त्रवतामग्रणीर्बुद्धिमान् हंसराजो[1] नाम सुमंत्रो नृपनिकटमासाद्य साञ्जलिबद्धं प्रार्थयामास ।। ५२ ।।

शृणु महाराजराज ! निजयशोविस्तारचन्द्रचन्द्रिकाधवलीकृत-दिगन्तरालसकलार्थिकल्पद्रुमसकलसत्कर्मजनितपुण्यराशे, अपरिमित-जन्मान्तरतपोराशिवशीकृतदेवतावृन्दश्रीतखतसिंहसार्वभौम ! त्वदेक शरणानामस्माकं वचनमन्यथा मा मन्यथा ।। ५३ ।।

तदनु मनसि दृढीकरणमाश्रित्य प्राक्तनीं गाथां राजानमाश्रावयति । शृणु गुणाकर ! पूर्ववार्त्ता । पुरा खलु द्वीपान्तरदीपायितकीर्तिमान् प्राप्त-राज्याभिषेकः त्वत्पितृमानकेशरी महीमहिषीमसृग्धाराभिरभिषिचयि-

---

१ हंसराजजोशीति नाम्ना इतिहासप्रसिद्धः वरिष्ठशासनाधिकारी ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तुमिव सकलराजकुलसपत्नीभावमासाद्य षड्विंशतिशतसहस्रसंख्यायुत-चतुरङ्गसेनाकलितैर्द्विपञ्चाशन्नृपालैः सह कतिचिन्मासान् संयुध्य प्रवलितशत्रुपालितसंत्रासमानपौरजानजल्पितानि भूरिजनपोषकसत्यसंधरणोत्सवापास्तसमस्तनिजपरिवारसकलामित्रतमः परिवृतपुरीदुर्गोदयगिरिमात्रविराजमानसहस्रभानो मानसिंह प्रभो लघुजयजयेत्यादिगुरुतरमङ्गलान्याकलय्य सामादिचतुष्टययुतोपि यतमानरणविजयचिन्तातन्तुसन्धानिततनिजान्तःकरणोभूत् ।। ५४ ।।

किमर्थं दत्तवान् जन्म ब्रह्मा मे चोत्तमे कुले ।
क्षात्रेपि राज्यभारं च किमर्थं दत्तवान् प्रभुः ।। ५५ ।।

तत्रापि निर्भयं युद्धे सर्वशत्रुक्षयं करम् ।
दत्त्वेदानीं स्वभावं मे तूष्णीमास्ते चतुर्मुखः ।। ५६ ।।

किं करोमि क्व गच्छामि कं यामि शरणं विभुम् ।
राज्यं गृह्णन्तु युध्यंतु पालयन्तु विशेषतः ।। ५७ ।।

जयन्तु मामकं सैन्यं मोचयन्तु रिपून्मम ।
सर्वं कुर्वन्तु राजानो चिन्ता नोत्पत्स्यते मम ।। ५८ ।।

किन्तु कारणमेकं मे चित्ते शूलायितं परम् ।
मत्पूर्वैः पालिताः सम्यक् प्रजाः पुत्रा इवौरसाः ।। ५९ ।।

किं वा कुर्वन्ति ते तास्तु भूपालाः परराष्ट्रजाः ।
मत्पूर्वैश्च मया चैव ये तु धर्माः कृताः पुरा ।। ६० ।।

.... ।
तांस्तु ते कुर्वते किं वा न जाने दुष्टचेतसः ।। ६१ ।।

इति सुबहुविचारराजपुत्रे सति
यमुनानुजनन्दनेव योद्धुम् ।
विधिरपि मनसीति चक्रभावं
नृपतिषु हरतु मानसिंहभावः ।। ६२ ।।

रामो जयाय मनुवंशपतिश्च युद्धे
वैवस्वतस्य सुसुतः किल सार्वभौमः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चिन्तामवाप च यथाहि तथा नरेन्द्रः
प्रारब्धदारुणरणे सुविलीनचेताः ॥ ६३ ॥

एवं बहुविधचिन्ताप्रचुरविस्मृतोपायमाहवे चतुरङ्गबलभङ्गाभङ्ग-विचारकोविदं मानसिंहमहीपालमासाद्य भ्रूभङ्गमात्रोत्पन्नाखिलाण्ड-ब्रह्माण्डमण्डलेश्वरप्रसादलब्धशंभूमहीसुरः कश्चिद्राजमन्त्रकुशलश्चण्ड-प्रचण्डरणपण्डितचण्डमुण्डखण्डनविखण्डितकोदण्डमण्डितबाहुदण्डदण्डित - रिपुमण्डलशिरोमण्डनमण्डितचरणसरोरुहां त्वदन्यस्तचित्तां शरणदां चामुण्डां विहाय मानसमन्यथा किं नयेथा इतीदं प्रभृतीः प्राक्तनीः प्रवृत्तीः प्रभवेत्वाश्रावयामास ॥ ६४ ॥

ततस्तद्वचनं भूपः संगृह्यामृतवत्तदा ।
मेने कृतार्थमात्मानं बन्धमुक्तः करीव हि ॥ ६५ ॥

विस्मृतः विस्मृतिर्गोपो गोपलब्धं पुनः पुनः ।
अपृच्छद् गिरिजापूजां पूजामार्गिफलप्रदाम् ॥ ६६ ॥

प्रसादं सादरं युद्धे कथं मे कुरुतेधुना ।
तदाचक्ष्व समक्षं मे सा कुर्वे लघुविस्तरम् ॥ ६७ ॥

सर्वं जानासि धर्मज्ञ ! किं ते वक्ष्यामि वै प्रभो ।
तथापि किंचिद्वक्ष्यामि यज्जानामि समासतः ॥ ६८ ॥

गोदानैश्चापि गोदानैर्गोदानैश्च विशेषतः ।
जाम्बूनदसुदानैश्च भक्तदानैश्च भक्तितः ॥ ६९ ॥

गंधपुष्पार्घ्यधूपैश्च दीपैर्विविधमङ्गलैः ।
नानाविधफलैर्भोगैरन्यैश्च बहुभिर्वरैः ॥ ७० ॥

प्रीणयस्व जगद्धात्रीं चामुण्डां चण्डविक्रमाम् ।
प्रीता भवेत्तु वाराही युद्धे चापि जयप्रदा ॥ ७१ ॥

एवं शंभुकरुणाजनितवचनमाकर्ण्य मूर्तिमत्प्रचलितपुण्यराशिरिव स्वयमुमामन्दिराभिमुखं मन्दं मन्दमटन्नटन्नपेतेतरकार्यरचनो मनोवचःशिरोभिरिष्टदेवतां नमन्नमन् प्रमुदितचेतसा नानाविधनृत्यगीतवाद्यबलि-प्रदानपुष्पफलभोगरसभूषणाद्यैस्संतर्पितभगवद्धैमवत्या विजयवरं लब्ध्वा

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

व्यवहितोत्तरक्षणे जनसंसदि संनिषणो वारीवारितवारणयूथपतिमिव वालिवद्बलशालिनं धीशालिनं बन्दीकृतेन्द्रराजमन्त्रिवर्यमाहूयते नान्यैश्च सह समालोच्य नमुचिसूदनसूनुसूनुसुमित्रासूनुभ्रातराविव मित्रत्वमापद्य तस्मादमात्याय पथ्यायमान समकथयत् ।। ७१ ।।

श्रीमानसिंहरणपण्डितवाक्यपूरैः
प्रक्षाल्य शुद्धमतये निजकोपचित्तम् ।
कालान्तकोपमशरीरसुवेषधारी
योद्धा बभूव न सतां रिपुरिन्द्रराजः ।। ७२ ।।

नत्वा नरेन्द्रं वचनं जगाद
प्रियं हि युद्धे विजयं प्रपद्ये ।
नो चेदिदं दर्शनमेव मन्ये
मन्यस्व मां चापरशक्यमायम् ।। ७३ ।।

इत्थमिन्द्रराजो नामयोधेन्द्रो मानसिंहदत्तरणवीटीमोमिति संगृह्य सकलदेवगणभयंकरदशकंधरपालितस्वर्गभूकल्पलंकादहनसमर्थमांजनेयमिव मां जानीहीति प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्य पञ्चशततुरङ्गतुरङ्गिभिस्सह कल्पान्ततनूनयादिव चतुर्दशभुवनदहनसमर्थमहाशनिरिव सकलनृपालयशो चन्द्रस्यापरपक्ष इव श्रीमानसिंहमहीपालशौर्यराशिविन्दुरिव दुर्गाग्रतो निर्गत्य योधाभिधानराजधानीमभितः परिवेष्टितामरिवाहिनीमवेक्ष्य दष्टौष्ठस्ततः पौरन्दरीं काष्ठामासाद्य विरचितनानाविधकपटरचनोयं परिकल्पितवियद्व्योमगगनबिन्दु बिन्दुरामवाहिनीयुतो मत्स्वामिकोपकल्पान्तानलेन प्रत्यर्थिजनपदान् सकृदेव दहामीति संकल्पयितुमिव स मलीमसदुष्करपुष्करमासाद्याहवगोत्राधरमादिदेव ।।७४।।

पंकेरुहाक्षि! वीक्षस्व युद्धं शत्रुवधाश्रितम् ।
प्रेषयित्वा तु तं राजा ह्यन्यानपि सुयोधकान् ।। ७५ ।।

आरब्धवान् युद्धमखं लोकविस्मयकारकम् ।
योधापुरमहाकुण्डे प्राकारदृढमेखले ।।
शतघ्नीकाष्ठसंयुक्ते चामुण्डाहवनीयके ।। ७६ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अनार्यसिंहश्चाध्वर्युर्ब्रह्माभूत्तु जलंधरः ।
यजमानो मानसिंहः शौर्यपत्नीसमन्वितः ।। ७७ ।।

योद्धारोपि च होतारो दर्व्यः प्रायेण चास यः ।
शत्रुसैन्यानि भूरीणि होमद्रव्याणि मे प्रिये ।। ७८ ।।

कामक्रोधाज्ययुक्तानि बभूवुः प्रियवादिनि !।
पशवः शत्रवो भूपाः पलायनपराः प्रिये ।। ७९ ।।

पराजयमहायूपबद्धा नृपजिगीषवः ।
पूर्णाहुतिः शत्रुशान्तिर्विजयोवभृथः स्मृतः ।। ८० ।।

एवं प्रकल्पितरणसवशतघ्नीरवस्वाहाहूतेषु वीरस्वर्निवासेष्वारूढ[१]-व्योमयानेषु मञ्जुलरवमनोहरकंकणाञ्चितदेवाङ्गनाकरकमलवीजित-चामरेषु सदयेषु रणे मानपञ्चास्य दत्तापमानापास्तसमस्तासुवीक्षण-विस्मितेषु मानसिंहनृपतः परिभवमाशङ्कमानेषु वीरवर्य्येषु स्वधामधाव-मानेषु सत्सु ।। ८१ ।।

तदन्वाशांतनोतविजयकीर्त्तये, पालितरसांतपर्यंतसम्पादितशत्रु-शान्तये, प्रशान्तरणमतये दिगन्तपलायितशेषरिपुनृपतये, सकलमनोरथ-सिद्धये, सकलसिद्धसेवितजलंधरचरणारविन्दन्यस्तमतये, मानसिंहप्रभवे जलंधरोनामयुगंधरः परमेश्वरः प्रसन्नः सन् वसुन्धराधुरन्धरं पुरन्दरमिव सुन्दरं तगतसिंहनामानं गुणार्णवं कुमारं भवान्प्राप्नोति वरमस्मै दत्वान्तरधीयत ।। ८२ ।।

मानसिंहस्ततो राज्यं चिराय कृतवान् सुखी ।
अन्तेऽनपत्यतप्तोभूत् काकुत्स्थ इव नित्यशः ।। ८३ ।।

तं प्रोचुर्नृपतिं चान्ते दाराः संतप्तमानसाः[२] ।
त्वदधीना वयं राजन्नान्यथा वयमन्यथा ।। ८४ ।।

त्वत्पालितमिदं राज्यं त्वराजकसमं भवेत् ।
अनपत्यत्वसंतप्ताः किं कुर्मस्त्वयि चिन्तिते ।। ८५ ।।

---

१ वीरस्वर्निवासेष्वांरूढत व्योम
२ संतप्तमानसः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

लोकत्रये न पश्यामस्त्वद्विनैव गतिं प्रभो !।
किं ब्रूमस्त्वांतु किं कुर्मः किं वक्ष्यामः प्रियंवद !॥ ८६ ॥

दारैः प्रलपितं श्रुत्वा राजा सकरुणं ततः।
दारानुवाच धर्मज्ञः कालज्ञः परया मुदा ॥ ८७ ॥

यूयं मा भैष्ट मानिन्यो मानयन्तु निमन्त्रितम्।
सर्वानन्दमयं वाक्यं शृणुध्वं कुलवर्द्धकम् ॥ ८८ ॥

गुज्जरे पुण्यदेशे तु पुण्यलोकसमन्विते।
सुवर्णनगरे[1] रम्ये राजधानीतिसंज्ञिके ॥ ८९ ॥

उदानीमेधते बालो राकाचन्द्र इवापरः।
निर्लञ्छनगुणैः पूर्णो सत्क[2]लानि सुसंयुतः ॥ ९० ॥

नाम्ना तु तक्तसिंहस्स रूपेण मदनोपमः।
पराक्रमेण बुद्ध्या वा आखण्डलसुतोपमः ॥ ९१ ॥

कल्पद्रुमसमो दाने माने सौमित्रिसंमतः।
पितृमातृमुखानां वै सेवया विट्ठलोपमः ॥ ९२ ॥

रक्षार्थमानयध्वं तं राज्यस्य रमणीयकम्।
एवमाज्ञप्य दारांश्च मन्त्रिणश्च विशेषतः ॥ ९३ ॥
....।
राजा राजपदं प्राप यावत्पुष्पवतो स्थितिः ॥ ९४ ॥

संयुक्तं रथहस्तिपत्तितुरगैस्त्यक्त्वा तु राष्ट्रं प्रभो !
गच्छामीति यदस्ति वस्तुत इदं मन्यामहे यौगिकम्।

नो चेत्सन्ति न किं मनोभिलषिताः श्रीचण्डिकाद्यागृहेऽ
हो ते शौर्यतरंगकीर्तिजलधौ नद्याद्य किं मज्जतः ॥ ९५ ॥

---

१ ईडर (?)
२ मत्कला

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

त्वां पाति पुष्करं पूर्वे दक्षिणे द्विरदाननः ।
पश्चिमे रामभूतेशावुत्तरे मण्डलप्रभुः ।। ९६ ।।

एवं मन्त्रिवरहंसराजवचनमाकर्ण्य स्मितवदनो नृपतिरप्यवदत्— शृणु सुमन्त्रिन् ! त्वद्गुणितापारमज्जनकगुणश्रवणजनितानन्दाद्विगुणितोत्साहस्यानिर्वर्त्तितजह्नुदुहितृयात्रामृतस्य मे वचनमाकर्ण्यताम् ।।

पुरा खलु कमलालयकमलपतिवंशजसगरनिर्मुक्ताश्वमेधाश्वमार्गणाय दिशि दिशि परिभ्रममाणान् सगरजनकानथ सप्तमलोकगतान् सुराधिपत्यत्वभङ्गभिया कपिलोटजे पुरन्दरनिक्षिप्तस्वाश्वदर्शनान् मुनिवंचकानतिक्रुद्धसकलमुनिवरभगवत्कपिलमहर्षितीक्ष्णतपःप्रलयानल-भस्मीकृतान् षडयुतसहस्र[1]संख्याकान् सगरजनकान् सागरानुद्धर्त्तुं तद्वंशजभगीरथमहाराजर्षितपःप्रार्थनया स्वर्लोकादवतरन्तीं त्रिलोकपावनीं भागीरथीं विना पावनासमर्थान् निर्जरान् कथमाश्रये ।। ९७ ।।

निश्चितं मे मनः कार्यमकृत्वा न निवर्त्तते ।
न निम्नाभिमुखं वारि रोद्धुं केनापि शक्यते ।।[2] ९८ ।।

विशालबुद्धयः सर्वे मन्त्रिणो मे हिते रताः ।
यदि तर्हि कुरुध्वं वै गंगागमनमाशु तु ।। ९९ ।।

तृणीकृतमहाराज्यं तक्तसिंहमहीभुजम् ।
दृष्ट्वा परमुदां प्रापुर्योद्धारो युद्धकांक्षिणः ।। १०० ।।

इमां सुरतरङ्गिणीं दुरितपुञ्जमाशोषणी-
मनन्यगतिपोषणीं शरणदां नदीभूषणाम् ।
स्वकोटिकुलतारणीं स्मृतवतो भुवो भूषणां
विहाय वदतीह कं तगतसिंह भूयो मृदुः ।। १०१ ।।

इति मनसि संधाय[3] मरालनायको नाम मन्त्री सर्वमङ्गलालोलजटाकृतनिवासजाह्नवीदर्शनैकमानसनृपकरुणापूर्णलोचनेक्षितस्त्रिपथगागमन -

---

१ षडयुतसहश्र
२ तु. कुमारसंभव ५/५
३ मनस्सघाय

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जूट द्विगुणितोत्साहो यात्रायै निश्चितचतुरङ्गसैन्याग्र्यादर्शमिव दर्शयति सुमयते नृपतये ।। १०२ ।।

वैतालिका इमे राजन्नानावाद्यविशारदाः ।
शतसंख्यान्विताः प्रायः प्रभाते नृपबोधिनः ।। १०३ ।।

एते तु बन्दिनो भूप ! गाने वायु सुतोपमः ।
पञ्चोत्तरशताभृत्या वंशचारित्रवादिनः[1] ।। १०४ ।।

एतेऽक्षरचणा[2] राजन् लिपौ तीव्रकराः सदा ।
शतद्वादशसंख्याका गणनावदनाः सदा ।। १०५ ।।

इमे चाराः सुराचाराः परेषां मर्मभेदिनः ।
सहस्राभ्यां युता राजन् मायागुणगणैर्युताः ।। १०६ ।।

इमे तु बलिनो राजन् सहस्रं वैजयन्तिकाः ।
नाना चित्रपताकास्ते सेनालंकारकारिणः ।। १०७ ।।

आधोरणारणाधाराः[3] संयुगे शत्रुपारणाः ।
त्वदाज्ञापालिनो राजन्पञ्चसाहस्रसंमिताः ।। १०८ ।।

एते तु सादिनो[4] राजन् ! कार्य-साधनवेदिनः ।
प्रभंजनसमा वेगे सप्तसाहस्रसंमिताः ।। १०९ ।।

ते तु रथिनो राजन् ! सहस्रत्रयसंमिताः ।
मेघनाद समायाने मेघनादरथैः पथि ।। ११० ।।

पद्गा इमे सुमुद्गा वा त्वष्टसाहस्रसंमिताः ।
अग्निशस्त्रकराः क्रूरा युद्धेन्तकसमाः प्रभो ! ।। १११ ।।

जेतारश्च त्विमे मल्ला ह्यल्लादर्शनलालसाः ।
पञ्चविंशतिसाहस्रा मत्तवारणवारकाः ।। ११२ ।।

---

१ चारण
२ लेखक, लिपिकार
३ महावत
४ घुड़सवार

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वारणाश्च त्विमे राजन्मदोत्कटसुशालिनः ।
शतत्रयसमायुक्ता युद्धचातुर्यबुद्धयः ।। ११३ ।।

कलभाश्च त्विमे राजन् ! स्वर्णदन्तैश्च शोभिताः ।
शतं मनोहरा राज्ञां गोत्रोत्पाटनलालसाः ।। ११४ ।।

सैन्धवाश्च त्विमे राजन्नश्वाः काश्मीरसंभवाः ।
मरुत्समा हि वेगेन त्वयुतं रणवाजिनः ।। ११५ ।।

सेनारक्षा इमे राजन्नरितूलहुताशनाः ।
सहस्रगणनायुक्ता युद्धचातुर्यमूलकाः ।। ११६ ।।

एते कंचुकिनो राजन्छत्रपंचकसंयुताः ।
जननिरिव रक्षन्ति राजदारान्नृपाज्ञया ।। ११७ ।।

कोषाध्यक्षा[१] इमे राजन्पक्षपातविवर्जिताः ।
कोशान् हरन्ति[२] [३]षष्टिवं यक्षराट्निधिसंनिभान्[४] ।। ११८ ।।

एतान्सर्वान् समालोक्य तस्मिन्नेव शुभे दिने ।
यात्रायै निर्गतो राजा नत्वा देवान्गुरून्द्विजान् ।। ११९ ।।

अथ विजयपुरात्प्रकल्पितशरदंबुदसंनिभशिविरेषु हस्त्यश्वरथपदातिचतुरङ्गबलपरिपालितैर्ष्वितरजनप्राप्तिदुश्शक्येषु योजनद्वयकल्पितावसंधेषु सृतिनिश्चितत्रयोदशघस्त्रेषु[५] सकलवैभवेषु मार्गेषु सत्सु ।। १२० ।।

राजचन्द्रनिधि[६]क्षोणीवत्सरे फाल्गुनेर्जुने ।
पक्षेब्धिदिवसे भूजे राजा तीर्थाय निर्ययौ ।। १२१ ।।

ततो निजदारकुमारमातृभिः सामन्तनृपतिभिर्मित्रैर्निजप्रधानैः पौरै-

---

१ कोशाध्यक्षा
२ भक्षन्ति
३ मूले शष्टिः
४ यक्षराणिधि संनिभान्
५ दिनेषु
६ मूले विध्रि

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रन्यैश्च गणनाशक्यधनशकटैर्वाजिवारणवारणै[1]रसंख्यातगोभिर्मृगादिर-मणीयमृगैश्च सह नानाभरणभूषितगजेन्द्रारूढस्वजनपदजनान्[2] कृपावृष्टि-भिरासेचयन्परमहीपालमनांसि वंचयन्सकलपरिवारजनानानन्दयन् सक-लार्थि जनमनोरथान्परिपूरयन् देवद्विजपितॄणामाशामुत्पादयन्प्रतिवसथ[3]-माकुतूहलं मृगयाविनोदमाविन्दयन् भागीरथीभाग्यमिव मन्दं मन्दं वसन्ग-च्छन् तगतसिंहमहीपालशिरोमणिर्विजयराजधानीमाससाद ।। १२२ ।।

नगरीपुरतो निवेशका
नितरां यान्ति सुमेरुतुल्यताम् ।
अलकापतिसम्पदोऽधिका
सततं येषु विराजते कला ।। १२३ ।।

तदनु रामसिंहप्रभुरपि शौर्यमधुपानमत्तचित्तमहीपालैः सकलराज-मन्त्रप्रधानीभूतप्रधानैः प्रत्यर्थिभूपरणार्थिसैनिकैः सह सौधोपरि संविश्य योद्धुमिव पुरीमावेष्टितां शतघ्नीसहस्ररचितप्राकारामनेककैलासाभशि-विरसंकुलां दिगन्तदन्तावलसमानदन्तिबृंहितप्रभीतपौरजनां जाम्बूनदमय-विचित्रतरपटपताकां सैन्धवारूढसांयुगीनैः परिरक्षितां, नानाभोगसंभृत-विचित्रतरपटनिर्मितराजभवनमध्यां, व्यापारिपरिष्कृतस्वराज्यव्यापारा-मितरजनसाधारणप्रवेशाशक्यां चतुरंगिणीं तां तगतसिंहमहीपालवाहिनीं परितोऽवलोक्य किं वागमिष्यत्याग इति शङ्कमानस्सेनाः पौरांश्च समा-हूय संप्राप्तमहीपालचमूकृतपरिभवमपि सहध्वमित्यादिश्य पुरीं परितस्तु अलंकारयत इत्याज्ञप्य नानाभरणभूषितगजराजमधिरुह्य चतुरङ्गबलैः सह जनकराजमिव तं प्रत्युज्जगाम ।। १२४ ।।

हर्म्येषु भर्मभरितेषु समुन्नतेषु
स्निग्धेषु मङ्गलयुतेषु सुवाद्यकेषु ।
तस्थुः प्रमोदमनसा युवतीयुवानो
राज्ञः समागमभवोत्सववीक्षमाणाः[4] ।। १२५ ।।

---

१ वाराणै
२ गजेन्द्रारूढितस्वजनपदजनान्
३ प्रतिवसधम्
४ वीक्ष्यमाणाः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पुरन्दराद्याः सुरसुन्दरीभिः
विमानसंस्था ह्यु भयोश्चरित्रम् ।
व्योम्नि स्थिताः सान्द्रदयासमेता
द्रष्टुं पुरीमूर्द्धनि वेषभाराः ॥ १२६ ॥

भवनान्निर्गते तस्मिंश्छविरान्निर्गतोप्ययम् ।
मार्गाद्विनिर्गताः पौराः सुदूरान्निर्गताः प्रजाः ॥ १२७ ॥

ततो शतध्नीध्वनिभिः[1] रामसिंहचमूद्भवैः ।
त्रस्ताः समस्ताः पौरास्ते सहस्रैस्तनितैः समैः ॥ १२८ ॥

बहिः शतघ्नीध्वनिभिस्तक्तसिंहचमूद्भवैः ।
वितस्तिमात्रमुद्धूता हर्म्येभ्यो नागरा मुहुः ॥ १२९ ॥

विनापराधं राजा तु धुनोति नगरं हि नः ।
किमित्यूचुः प्रजाः सर्वा रामसिंहरता नृपम् ॥ १३० ॥

तदनु तगतसिंहो मदधारास्वादनमत्तचित्तभ्रमरालंकृतमस्तकभव-ग्रहांचितशातकुम्भखचितनानाविधरत्नतेजः प्रदीप्ताग्रदेशमापादलम्बित-मौक्तिकसरशतालंकृतकर्णमूलं तप्तहेमालंकृतदन्तान्तरालं रणरिपुकाल-दण्डायमानतुण्डप्रतिमण्डितं सृणिपाणिसूतारूढितासनं नानाविधविचित्र-कौशेयपटशोभितपक्षभागमनुपमितराजास्तरणमध्यकं सकलकल्पनमैरा-वतकलभमिव विराजमानं गजनायकमधिरुह्य पुरः पुरोजवजनितमदकल-नशोभितकलभपंक्तिरिव प्रभंजनसमजववाजिसमारूढाभूषणाभूषितनिज-कुमारपंक्तिश्चतुरङ्गबलयुतो निर्जगाम ॥ १३१ ॥

निर्गताः शतशः प्रायः प्रथमं वैजयन्तिकाः ।
मृदङ्गाश्चापि भेर्यश्च ततो दुन्दुभयः शुभाः ॥ १३२ ॥

मधुररचनसंयुक्ता वाद्यन्ते वाजिवाहकैः ।
शंखध्मातास्ततो जग्मुः शंखपूर्णपरायणाः ॥ १३३ ॥

---

१ ध्वनिभी

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मनांसि रञ्जयन्तो वै प्रजानां मधुरस्वनैः ।
लयान्वययुताः पुंसस्तालहस्तास्ततो ययुः ॥ १३४ ॥

ततः पदातयो जग्मुश्चतुस्साहस्रसंमिताः ।
पीताम्बरधराः केचित्केचिद्वै रक्तवाससः ॥ १३५ ॥

श्वेताम्बरयुताः केचित्केचिन्नीलपटैर्युताः ।
द्वन्द्वैरेवाधिगच्छन्ति त्वद्निर्मितकिरीटकाः ॥ १३६ ॥

अग्निशस्त्रकरस्कन्धाः मन्थरं प्रययुः पुरे ।
ततो राजप्रधानास्ते सर्वाभरणभूषिताः ॥ १३७ ॥

राजैश्वर्यं प्रजानां वै दर्शयन्तः स्वकं तथा ।
हयोत्तमसमारूढा मन्दं मन्दं ययुर्मुदा ॥ १३८ ॥

ततस्तुरङ्गपंक्तिस्तु निर्गता जनमोहिनी ।
सर्वाभरणसम्पन्ना मालेव वसुधाश्रियः ॥ १३९ ॥

केचित्पद्भ्यां चरन्तीह केचित्पद्भिस्तथैव च ।
उत्प्लवन्ति तथा केचित्केचिन्नृत्यन्ति वर्त्मनि ॥ १४० ॥

मर्दयन्तश्च पौरांस्तु वक्रगत्या विशेषतः ।
ततो वाराङ्गनाः सर्वाः सौदामिन्य इवापराः ॥ १४१ ॥

नानाभरणभूषाढ्याः सुन्दर्यो जनमोहिताः ।
वस्त्रान्तर्व्यञ्जितस्तन्यो युतां वसु मनोहराः ॥ १४२ ॥

गन्धर्वगानगायन्त्यो यान्ति सर्वैश्च मानिताः ।
ततस्तु योगिनः शूरा जटामण्डलमण्डिताः ।
विरक्ता गृहदारेषु रक्ता वै रिपुदारणे ॥ १४३ ॥

तीक्ष्णशस्त्रकरा एते निर्गता वै सहस्रशः ।
ततो राजकुमाराश्च सर्वालङ्कारभूषिताः ॥ १४४ ॥

उच्चैःश्रवसमानाभ सैन्धवेषु सुसंस्थिताः ।
पूर्णेन्दुवदना सर्वे राजलक्षणलक्षिताः ॥ १४५ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

धीराः शूराः समराकाराः निर्गताः शस्त्रधारिणः ।। १४६ ।।

तदनु चमूत्कटातिनिर्भरसंघर्षितराजवीथिकोद्गतधूलिसमाच्छादित-द्यावापृथिव्यन्तराले भेरीमृदङ्गदुन्दुभिकाहलीशंखरथगजवाजिरवैः प्रति-नादिते चाकुमारप्रवयस्सकलप्रजाभिरेकैकस्मादेकैकाधिकतयावीक्षित-राजाग्रसंगतलक्षलक्षितबले विजयपुरे कालाम्बुदवृन्दनिरन्तराच्छादित-पुष्करोदितसकललोकानन्दकरसहस्रभानुरिव दिगन्तदन्ताचलगर्वसंहरण-समर्थसारैरावतसंनिविष्टसहस्राक्ष इव शरच्चन्द्रचन्द्रिकासमनिजर-दनकान्तिधवलीकृतसैन्यगजैः समस्तशस्त्रालंकृतक्षत्रियमण्डलैः परिवृत-स्तगतसिंहसार्वभौमः समुज्जगाम ।। १४७ ।।

तख्तसिंहमहीपालो रामसिंहप्रभुस्तथा ।
मिलित्वा तु यथा न्याय्यं रामसिंहपदं गतौ ।। १४८ ।।

तावप्यनुगता सेना सहस्रैश्च शतैर्युता ।
गजाश्ववाहिनी रम्या शेषेव सुरवाहिनी ।। १४९ ।।

एवं प्रजाभ्यः प्रदर्शितनिजसमृद्धवैभवौ परस्परावलोकनजनित-सान्द्रानन्दमन्दरवासिनावनुपमितोपलजालरचिते बहुविधप्रकल्पितचित्र-विचित्रतमे राजभवने यथोचितनिजस्थानेषु सर्वेषु निषण्णेषु सत्सु सकल-वाद्येषु वाद्यमानेषु गानेषु गीयमानेषु वाराङ्गनासुन्दरीषु नृत्यमानासु स्तुति-पाठकेषु स्तूयमानेषु सकलमनोहरमञ्जुलरुतशुकपिककुरवकादिषु कूजत्सु सत्सु सुवर्णदण्डमण्डितव्यजनेषु वीज्यमानेषु महाचामरेषु प्रचलितेषु विद्वत्सु विद्याविनोदेषु सत्सु परमहीपालेषु वीरासनेषु संविशत्सु सकल-मन्त्रिवर्येषु महाराजाग्रत्सु सत्सु नानाविधसुमनोनिर्मितगुच्छेषु द्युमद्युमा-यमानेषु सत्सु बहुविधालंकृतमहासिंहासनयोः सुरराजयक्षराजाविव तगतसिंहमहीपालरामसिंहभूपालौ संविविशतुः ।। १५० ।।

नत्वा तु तं महीपालं रामसिंहप्रभुस्ततः ।
वक्तुं चक्रे सुमाता तु मतिं सान्द्रदयाकुलाम् ।। २५१ ।।

स्वागतं किन्तु राजेन्द्र ! भवद्भिस्सकुटुम्बिभिः ।
दर्शनं श्रीमतामद्य कल्याणायैव कल्पितम् ।। १५२ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तप्तं तपः किमस्माभिः पूर्वं स्वस्तिकरं महत् ।
भवादृशास्तु राजानो धर्मनिष्ठैकचेतसः ।। १५३ ।।

विरला सन्ति लोकेस्मिन्नो चेद्धर्मस्थितिः कुतः ।
क्षत्रियाणामयं धर्मो मखगोद्विजरक्षणम् ।। १५४ ।।

अद्यापि भवतां राज्ये ब्राह्मणाः सन्ति कोटिशः ।
वेदशास्त्रार्थसम्पन्नास्तत्त्वज्ञानपरायणाः ।। १५५ ।।

याजने यजने चैव दक्षा दीक्षापरायणाः ।
संप्रत्यपि हि कुर्वन्ति यागांश्च दिवि शुश्रुमः ।। १५६ ।।

प्राप्तराज्यैस्तु युष्माभिर्मथिताः परिपंथिनः ।
निजनाम्ना तु रचितः सागरः सागरोपमः ।। १५७ ।।

वापीकूपतडागाश्च रचिताः सनिबन्धनाः ।
काव्यालंकारशास्त्रेषु कृतो बहुपरिश्रमः ।। १५८ ।।

गंगा क्व ज्वलदिन्दुमौलिनिलया संसारिणां दुर्लभा
यूयं राजदनेकवैभवयुताः क्वानन्तराज्याधिपाः ।
मत्तेभेन्द्रसमौक्तिकुम्भदलने शक्तोपि कण्ठीरवो
यत्नं किं कुरुते[1] सुरेन्द्र सुलभे पीयूषपाने[2] क्वचित् ।। १५९ ।।

धीमन्तः प्रथमं नियन्ति नितरामंभोनिधिं वै यशः
पश्चाद्ब्रह्मविचारनीतकलुषा यान्ति द्विजेन्द्रप्रभुम् ।
कोपाटोपकषायितारुणदृशो मालिन्यचित्ता वयं
जानीमः कथमद्य धर्मनिचयं मोक्षप्रदं शाश्वतम् ।। १६० ।।

युष्मत्कीर्तिशशाङ्ककान्तिधवले लोके यथाभान्ति न
त्वत्क्षोणीपतिकीर्तितारनिवहा ह्यानन्ददानाक्षमाः ।

---

१ कुरुते
२ पियूष

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

युष्मज्जातसमस्तनीतिवरटा चेष्टा विमोहं गता
भान्ति त्वत्र कथं परं गुणधियो ये राजहंसाः कदा ।। १६१ ।।

नाज्ञानी लभते पदं····दमु····ज्ञानी तदेवामलं
चर्मास्थीन्यपि तारयन्ति निरयान् स्वान् कोटिशः पापिनः ।
यस्याः स्पर्शनतः पदं जगदिदं ह्यारं ध्रुवं याति वै
तां गंगां परिसेवितुं यतवतां किं ब्रूमहे वस्तपः ।। १६२ ।।

अहो भगवद्भांग्यवतां मनोभवारातिसरव(?)शंकनीया ।। १६३ ।।

आदौ क्षत्रकुलोद्भवो गुरुतरस्तत्रापि भूपालता
तस्या अप्यधिका सुनीतिपदवी तत्रापि धर्मार्जवः ।
तस्मादीषणसम्पदो लघुतरास्तत्रापि यात्रामति-
स्तत्सर्वं विधिना भवत्सुलिखितं धर्मस्वरूपेष्विह ।। १६४ ।।

तदनु विधिनरेन्द्रलक्षणलक्षितानरिक्षोणीपालकुलध्वान्तध्वंसपतंगान् धाराधरधाराधारधरणीतलान्तपर्यन्तवर्त्तिमर्त्यपोषणशीलस्याश्रितजनदैन्य-दैन्यदस्य श्रीमत्तगतसिंह- - तस्य जयशीलान् सूनूननसूयं स्वासूनि········ भ्रातृभावमावेदयति ।। १६५ ।।

....

रक्षन्तु राज्यं सकलं सकोशम् ।
जामातृभावः कथमस्ति वार्द्धौ-
हरिर्न जग्राह नु मां च रत्नम् ।। १६६ ।।

श्रीरामसिंहनृपतेः खलु तख्तसिंहो
वाचः प्रति प्रतिवचः प्रजगाद राजा ।
अल्पाक्षरं गुरुतरार्थलसत्सुपथ्यं
सत्यं सुनीतिनिलयं सदयं त्वुदारम् ।। १६७ ।।

हे रामसिंहनृपभूषणवारिजाक्ष !
प्रीतः खलु प्रतिदिनं त्वयि मन्त्रिवर्गः ।
लोका भवन्ति सुमुदे खलु धर्मबुद्धे
प्रत्यर्थिनस्तव पदं नु सदागताः किम् ।। १६८ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गोब्राह्मणसुराचार्यदीनार्थिशरणागतान् ।
यथाभिलषितैः कामैः प्रीणयस्व यथोचितम् ।। १६९ ।।

सत्यव्रतैः सुनीतिज्ञैः स्वामिकार्यैकतत्परैः ।
अकृतघ्नैः सदामात्यैः कार्यमार्य विचार्यताम् ।। १७० ।।

अनीकनिलयान् क्रूरान् स्वामिकार्यस्वतस्करान् ।।
सचिवांस्त्वानधर्मज्ञान् दूरतः परिवर्जयेत् ।। १७१ ।।

शौर्यशत्रुद्वयान्न्यूनौ राज्यप्राणौ तु मानिनः ।
राज्यं प्राणं त्यजेन्मानी न च शौर्यं न वैरिणम् ।। १७२ ।।

अतिलोचननिश्चितक्रियं
लभते श्रीश्च विवेकिनं स्वतः ।
वृणुते कथमङ्ग सुन्दरी
बधिरान्धं तु मुदाविवेकिनम् ।। १७३ ।।

गुणमानसुरञ्जितः पुमान्
गुणगृह्येषु मनः प्रयच्छति ।
मदिनं करिणं विहाय किं
करिशत्रुं हरिमिच्छति त्वलि ।। १७४ ।।

दूरतो यदि कृता मनीषिणो
ते तदा कुमति नान्यपूजकाः ।
मालतीसुमनिरस्तकानलीन्
करी शिरसि धारयत्यलम् ।। १७५ ।।

श्रीतक्तचम्पूललितप्रबन्धे
नवे सुगम्भीरपदानुयुक्ते ।
काण्डो द्वितीयः किल काण्डकल्पो
युतः सुधर्मैरभजत्समाप्तिम् ।। १७६ ।। २ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तृतीय काण्ड

इत्थं नरवरमुपदिश्य तत्कृतयथोचितसत्कारमापद्य सकुटुम्बमन्त्रि-वाहिनी विजयपुरान्निर्गत्यानुपमितमृगयाविहारमारचय्य कतिपयदिवसै-रिन्द्रप्रस्थाभिधानीं राजधानीमवलोक्य मत्पूर्वजाः पुरीमिमां निर्यवनां न चक्रुरितीव क्रुद्धः प्राक्तनीं मर्यादामुल्लंघ्य द्विगुणितबाहुपराक्रमः पुराभि-मानिनः शूरा केपि वा युद्धाय सन्नद्धा भूयासुरिति मार्गमाससाद ।। १७७ ।।

आयातं नरपुङ्गवं विजयिनं संवीक्ष्य हूणास्तदा
किं वा राजकुमार एष कुरुते जानीमहे नो वयम् ।
संत्रस्य प्रयता वभूवुरिति ते मार्गान् पुरीः सर्वतो
विन्दन्ति त्ववने मतिं गुणधियो राज्ञो मतेर्वर्त्तिनः ।। १७८ ।।

कामोपमं कामविचारशील
नार्यः सुसंपूज्य समूचिरे तम् ।
नेत्रोत्पलेः कामुकचित्तहारै-
र्हारैरुरोजैः कुसुमैश्च कान्ताः ।। १७९ ।।

कान्तोयं यदि चेद्धनेन पतिना राज्येन किं बान्धवै-
रस्मान् किं कुरुते रतौ रतिपतिमारस्तदास्तां च नः ।
राजा वा यदि चेज्जने सफलतां मन्यामहे नो वयं
पौरैर्वा कृतमस्ति किं वरमहो योधापुरन्ध्रीतपः ।। १८० ।।

एवं नृपतिरपि सकल पौरजनमनांसि रंजयन्नरविन्दभवभवहेतुप-दारविन्दमकरन्दधुनी यात्रासत्वरेणाविष्कृतेषच्छौर्यभवाद्भीतमिमं जनं कुलीनमपि कौलीनमिव मां जानीहीति ब्रुवताच्छाच्छम्लेच्छेभ्येन सविनय-प्रेषितान्युपग्राह्याण्युपगृह्य तान्यन्यान्युपायनानि नृपनीतिप्रौढकल्पनाकुश-लेन श्रीमद्राधिकारमणपदारविन्दन्यस्तचित्तेन बुद्धिमता हरिश्रवोभिधानेन कंचुकिना यवनभूपतेः संप्रेष्य तं मान्यमत्यैव सम्मान्यचित्तजरक्षिता-नामपि नृपवरलोचनकुन्तपातनव्याकुलितचित्तानामनिमीलितदृशां युव-तीनां मनोधनमाहृत्य कार्यगत्यामात्यानुजं कुमुदिनीबन्धुशेखररमणी-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मणिचरणसंरुणच्चेतसं सत्यामृतधौतमानसमितनियोजितमर्यादावर्त्तिन सभानिश्शंकिनं शिवनारायणाभिधानं मन्त्रवतां वरिष्ठमुपमन्त्रिणं मन्त्रैस्सम्मन्त्र्य मायापुरीं पुरः प्रेषयामास ।। १८१ ।।

इन्द्रप्रस्थपुरात्स्वसैन्यसहितो निर्गत्य राजा ततो
गत्वा वर्त्म दिनत्रयेण सुयुतं चाष्टादशैर्योजनैः ।
दृष्ट्वा तां सहसा ननाम शिरसा मायापुरीं मुक्तिदां
गंगातीरमनुत्तमं मुनिजनैः संसेव्यमानं च यत् ।। १८२ ।।

राजानो राजपुत्राश्च राजभार्यास्तथैव च ।
विविशु[1]र्मातरो राज्ञो राजामात्यास्तथा पुरीम् ।। १८३ ।।

वासं चक्रुर्यथार्हेषु भवनेषु यथासुखम् ।
राजापश्यत्ततो गंगां सर्वैः सह समन्वितः ।। १८४ ।।

तदनु पुलोमजादिदेवाङ्गनापूजितसौमङ्गल्यवस्तुशोभितां मत्स्यकच्छमकरजलगजाद्यनेकजलचरां, कूजद्धंसकारण्डा[2]द्यनेकविहंगमण्डितां, कूलोभयजनितनागपुन्नागतमालनारिकेलपनसचूतजम्बूकपित्थचंपकादिभूरुहव्यालोललताच्छदाच्छादनशीतलतरामृतां, सकलमुनिजनसेवितपर्णकुटीरालंकृतां, नन्दनपतिदन्तिदन्तकुन्देन्दुधवलां भगवतीं त्रिपथगामवलोक्य तत्कालोचितपूजाभिः संपूज्यावगाह्याद्यवासरोचितकर्माणि स्वैः समं कारयामास ।। १८५ ।।

तत्तीरे कृतवासिनं नृपवरं संवीक्ष्य तन्मानसं
स्तौत्यं चक्रुरनुक्रमेण धरणीदेवास्ततो मन्त्रिणः ।
संकल्पः फलतां त्वया गुरुतरो नीतः श्रमैर्त्रं विना
यस्मिन् जह्नुसुताकटाक्षसरणिः किं तस्य कौ दुर्लभम् ।।१८६।।

ततो महीपालस्तत्तत्कालोचितकार्यविचारदक्षांस्तत्तत्कार्येष्वाज्ञप्य यथोचितस्थानगतमातृसुतकलत्रादिभिः सह पुरोहितादिसकलभूसुरवर्याज्ञया गंगां सम्पूज्य प्रविश्य सर्गाद्ये तज्जन्मान्तपर्यन्तं मत्कृतचतुर्विधसकल-

---

१ विविश्रु
२ कारण्ड = बतख

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दुरितनिवृत्तये धृतरूपत्रयश्रीपरदेवताप्रीतये चतुश्चतुस्त्रिवदनभुजनेत्रपुरैकाधिपत्यार्थं ब्रह्मरूपिण्यामभीष्टवर्षिण्यामस्यां त्रिपथगायां सकुटुम्बस्स्नामहं करिष्य[1] इति संकल्प्य निगमागमोक्तस्नानविधिना स्नात्वामूल्यकौशेयाभूषणानि संधृत्य संध्यादिकर्माणि संनिवर्त्त्य देवर्षिपितॄन्स्वपितॄंश्च तर्पयामास ॥ १८७ ॥

राजदाराश्च पुत्राश्च राजमातर एव च ।
यथोचितानि वै चक्रुर्यथाशास्त्रं यथाविधि ॥ १८८ ॥

पापान्यात्मवियोगमाशु[2] नृपतः संप्राप्य गंगातटे
संचिन्त्याल्पतपांसि तानि नृपतीन्सर्वान्प्रति त्वंजलीन् ।
दत्वा निर्दय एष नः किममुना कष्टं तु धात्रा कृतं
ज्ञात्वैवं नृपसिंहवीरसदनं गच्छन्ति वंशे न वा ॥ १८९ ॥

श्रीतख्तसिंहकरदत्तजलाञ्जलीन्वै
श्रीमानसिंहसुमुखाः पितरः प्रगृह्य[3] ।
कालत्रयेपि हरिधाम न यान्ति वंश्या-
स्ते ते त्वितीह हरिधामगता ब्रुवन्तः ॥ १९० ॥

भीष्ममातरमासाद्य सादरं राजमातरः ।
आराधयंस्तदा देवीं दुःखसंसारतारणीम् ॥ १९१ ॥

शन्तनोरङ्गनां गंगां मंगलैस्तु नृपांगनाः ।
सांगैश्च पूजनैः सांगां पूजयामासुरंगनाम् ॥ १९२ ॥

जह्नोः सुतां सुता राज्ञोः गंगां जलधिगां पराम् ।
अर्च्चयामासुरत्यन्तमर्च्चनैः कान्तकाञ्चनैः ॥ १९३ ॥

ततो नृपतिरप्यतिसौरभ्यपुष्पनिष्पादितसुतैलैः, सकलैर्विशेषहेमरचितभद्रकुम्भानीतकृतोष्णसकलपुण्यवाहिनीकमलैर्विमलैः कमनीयमौक्तिकहेमचेलाञ्चिततिरस्कृतपद्मरागकान्तिकौशेयैर्हेमकुशेशयचिह्नितैस्तप्तजा-

---

१ करिष्ये इति
२ वियोगमाश्रु
३ प्रगह्य

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

म्बूनदसमस्तरत्ननिर्मितकिरीटताटंककेयूरहारकङ्कणाङ्गुलीयकमेखलारु-चिरघण्टिकाकलितनूपुराद्यमूल्यविशेषभूषणैराकर्षणैः कस्तूरिकाकलित-तिलकोचितकुंकुमैरस्वप्नशङ्कितैः काश्मीरांगरागकर्पूरहरिचन्दनादिगन्धैः सुगन्धैरष्टापदसूत्रास्पष्टग्रथितनानाविधकुसुमहारगुच्छैः स्वच्छैः पारिजा-तबकुलचामन्तिकाचम्पकपाटलाब्जमल्लिकाबिल्वप्रवालतुलसीपुन्नागम-न्दारकदम्बजाजीकरवीरादिकुसुमैरस्र सितैर्नानाविधगन्धसारसंयोजितव-स्तुधूपैः सुधूपैरजितदीपिकास्तंभाग्रसंयोजितगत्राक्षायाप्लुतवर्त्तिकान्तप्रका-शितसहस्रदीपकैर्व्यापकैर्मणिगणखचितकनकपात्रप्रसारितगोघृताप्तभक्ष्य-भोज्यलेह्यादिचतुर्विधमधुरान्नैः सशाकसूपैर्दधिघृतमधुगुडक्षीरैर्नाना-विधस्वादुफलैरमृतोपमितामृतैः पाण्डुरतां यातकोमलनागवल्लीसुपर्णैः सुवर्णैः संतुदफलमौक्तिकचूर्णजाजीफलपत्रैरलकादियुक्तैरपरिमितकर्पूरक-ल्पितनीराञ्जनरत्नपात्रैः सुवर्णरंजितरचितकुसुमसमस्तरत्नकोटिकल्पित-मन्त्रपुष्पैः सपुष्पैः सकलनिगमपारावारपारीण द्विजेन्द्रमुखकमलनिर्गतवेद-घोषैरागमसंमतैः पूजनैर्भागीरथीं प्रपूज्य प्रार्थयामास ॥ १६४ ॥

भागीरथीदशकम्

गंगे तरङ्गपरिकम्पित वार्त्तखण्ड-
निर्यातपुष्परजसा धृतकान्तकान्ते ।
वैकुण्ठपादजनिते जनितापहन्त्री
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ १६५ ॥

के वा न सन्ति सुरनायकपावकाद्या
दिक्पालका वयमितीह सुदर्प्पयुक्ताः ।
पातु(?) किमम्ब मलिनोदययात्र शक्ताः
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ १६६ ॥

गङ्गे कुरङ्गिनिलये गिरिजासपत्नि !
सापत्न्यभावमचिरं त्यज देम्यचित्ते ।
नीरन्ध्रपूर्णकरुणामयपूर्णदृष्टे
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ १६७ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कृच्छ्रातिकृच्छ्रगुरुदारविसर्जनैर्वं
वाग्बन्धनैरचलचिन्तनतत्परैश्च ।
यान्ति प्रमादरहितान् प्रति नो भवाद्या
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ १९८ ॥

श्रीजह्नुपुत्रि परिपालयसे[1] भवन्ती
माता पितृघ्नगुरुतल्पगजारभावान् ।
दुष्कर्मिकर्मरहितेषु तवातिमोहो
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ १९९ ॥

ब्रह्मेन्द्ररुद्रहरिसेवितपादपद्मे
वेदान्तनिश्चितनिरञ्जनचित्स्वरूपे ! ।
आद्यन्तशून्यपरमे रविकोटिकान्ते
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ २०० ॥

रम्ये हिमांशुशतकोटिसमानशैत्ये
पुण्यामृतं त्ववसिते स्पृशतोपि दूरे ।
पुण्याघवत्सुदयसे तव तु स्वभावो
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ २०१ ॥

तीरे त्यजन्तमसुमन्तक एव यं ते
ह्यायाति सूर्यजगृहं तु यदा विनेतुम् ।
धावन्ति सोपि निरयात् पितरश्च विष्णुं
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ २०२ ॥

त्वां वर्णितुं न हरिणा च हरेण लब्धो
नाद्यापि ते महिमकोटितमांश एव ।
किं वर्णयामि जडधीरहमम्ब ! गङ्गे
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ॥ २०३ ॥

---

१ परिपालयते

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गङ्गेति जह्नुतनयेति पथि त्रिगेति[1]
भागीरथीति हरिजेति गिरीशजेति[2]।
नामानि षट् तव पठन्ति तरन्ति ये ते
मातः पुनीहि शरणागतभक्तमेनम् ।। २०४ ।।

श्रीतक्तसिंहरचितं शुभदं च नित्यं
भागीरथीदशकमाशु पठन्ति ये ते।
आनप्तृ[3]पुत्रसहिताः सकलानभीष्टान्
भुक्त्वा हरिं समनुयान्ति न यान्ति सर्गम् ।। २०५ ।।

इत्थं परदेवतां संस्तुत्य प्रमुदितचेतसा रौक्ममयनानाविधवस्त्रभूषणैः समलंकृतां सवत्सां पयस्विनीमशुष्कां सनिष्कामेकैकश्यं गामेकैकस्मै पञ्चविंशत्युत्तरसहस्रेभ्यो द्विजवर्य्येभ्यो दत्त्वा नदीमातृकशतग्रामैः षोडशमहागजैः सपादशताश्वैरपरिमितविचित्रवस्त्रैः सदक्षिणैरेतैरतृप्तान् भूसुरान् संवीक्ष्य मनस्येव शशंके ।। २०६ ।।

दत्तक्षितिर्नृपवरः कुसुमैर्निरस्त-
स्तेषां न तृप्तिरिति यैर्विरराम रामः।
तृप्तिं विधातुमहमद्य कियान् द्विजानां
वार्द्ध्यग्निशान्तिकरणे जलदानशक्ताः ।। २०७ ।।

तथाप्यहं तु विप्राणां सर्ववित्तप्रदानतः।
तृप्तिं करोमि तं चैव काण्डवेनाग्निमर्जुनः ।। २०८ ।।

ततो तीरराशिकृत तव लक्षलक्षितरूपरूपिणीं लक्ष्मीमलक्ष्यीकृत्य विचक्षणतया पक्षपातमपास्य प्रत्यक्षमागतक्षमानिर्जरान् क्षमाप्यपक्षिपत्रभुजजक्षत्रियमन्तरे मां को रक्षेदिति चेतः समाधायाभ्यस्तधनुर्वेदनीतकालैः क्रीडालोलैर्वालैर्यशोवर्त्तिसिंहादिपुत्रैः सह तगतसिंहभूपालः प्रतिब्राह्मणं यथोचितमाददे ।। २०९ ।।

---

१ त्रिगेती
२ गिरीशजेती
३ आनृप्त

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy.

मन्यामहेखिलवदान्य सुजह्नुकन्या
मान्योसि षोडश सुमान्य सुमान मान्याः ।
मन्यंत एव पितरोपि सुराश्च कन्या
ऊचुर्यतो द्विजवरास्तु पुनः सुशान्तम् ।। २१० ।।

अथ रत्नगर्भामृतांधसां वचनममृतवत्संगृह्य कुकुद इव शतकन्या ब्रह्मचरेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दत्त्वा विपत्रशिलादिदेयदानानि सदक्षिणानि सर्वाणि च दत्त्वा साहस्र द्विजवरानन्यान् संतर्प्पयन् तीरनगरवासिनो देवाँश्च समर्चयन् यात्रोचितानि कर्त्तव्यानि कुर्वन् पुत्रैर्मंत्रिभिः स्वपाण्डतै-रन्यैर्विद्वद्भिः सह सभायां स्वयमुपविश्य सकलपुराणशास्त्रार्थविनोदेषु स मनः संदधे ।। २११ ।।

राजा ब्रुवच्छुभं वाक्यं श्लक्ष्णं गांभीर्यसंयुतम् ।
सभास्थान् विदुषः सर्वान् ज्ञानविज्ञानसंयुतम् ।। २१२ ।।

जगतः कारणं माया मायायाः ब्रह्म कारणम् ।
एवं तु वैदिकैर्वाक्यैः प्रवदन्ति मनीषिणः ।।
ब्रह्म त्वनादि निर्वाच्यमिन्द्रियैश्च विवर्जितम् ।। २१३ ।।

अचलं निर्गुणं तत्तु व्यापकं निष्क्रियं सदा ।
एकमेवाद्वितीयं च ज्ञानाज्ञानविवर्जितम् ।। २१४ ।।

एवं गुणविशिष्टे वै निर्गुणे परमात्मनि ।
कथं माया समुत्पन्ना ह्यविद्या च कथं भवेत् ।। २१५ ।।

अन्यच्च किञ्चित्पृच्छामि ज्ञानविद्भ्यश्च यच्छ्रुतम् ।
अजामेकामिति श्रुत्या वेदैरन्यैश्च पण्डितैः ।। २१६ ।।

एकत्वं चोच्यतेऽजत्वं मायाया अप्यनादिता ।
न्यूनाधिके श्रुतीनां न श्रुतयश्चोभयोः समाः ।। २१७ ।।

वचसामुत्तरं किं मे सत्वरं चोच्यतां द्विजाः ।
राज्ञापादितवाक्यानि श्रुत्वा सभ्याश्च पण्डिताः ।। २१८ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चक्रुर्विवादमतुलं चान्योन्यं जनसंसदि ।
श्रुतिस्मृतिभिरन्यैश्च वाक्यैश्च बहुभिस्तथा ।। २१९ ।।

मीमांसवचनैश्चक्रु: परस्परजिगीषया ।
पण्डितास्तत्तर्कसिंहस्य मायासिद्धान्तवादिन: ।। २२० ।।

अपरे पण्डितास्तत्र ब्रह्मसिद्धान्तवादिन: ।
तेषां विवाद: संप्राप्तो दन्तिनामिव गर्विणाम् ।। २२१ ।।

नृपविद्वत्कृतान् प्रश्नान् खण्डयन्ति तदापरे ।
अपरैश्च कृतान् राज्ञ: खण्डयन्तोह पण्डिता: ।। २२२ ।।

हसन्त: प्रथमं चक्रु: कक्षयैव तत: परम् ।
पूर्वपक्षैश्च राद्धान्तैर्विवाद: समजृम्भत ।। २२३ ।।

कृतो ब्रह्मणि सिद्धान्तो ब्रह्मवादैकवादिभि: ।
स एव स्वीकृत: पक्षो मायावादैकवादिभि: ।। २२४ ।।

मुनिर्वृत्तिर्धृता सम्यक् सभायां नृपपण्डितै: ।
हासं प्रापुश्च विद्वान्स: स्वमतस्थापनात्परे ।। २२५ ।।

स्वान्यान् दृष्ट्वा तदा राजा पण्डितांस्तु तथाविधान् ।
अन्तर्वाणिमणिं त्वेदमूच निकटवर्त्तिनम् ।। २२६ ।।

विद्याकरण्ड शृणु पण्डितदण्डिताज्ञ-
गीस्तुण्डखण्डितमहो परपण्डितैर्यत् ।
श्रीचण्डिकामतमनूद्धरवाद चण्ड
त्वूचे नृपस्तदिति शंकरकेशवाह्वम् ।। २२७ ।।

तत: शंकरकेशवोपि नृपवचनमाकर्ण्यानन्तरमन्तरायोपशान्तयेष्ट-देवतां मनस्येव ध्यायन् कलभयूथप प्रविशन् मृगेन्द्रपोत इव सभामध्यम-ध्यास्पहे विपश्चितश्चिरसंपादितसकलविद्यादिगन्तनीतगुणवन्तो भवन्तो भवत्कीर्तिहिमांशवे श्रीतखतसिंहनरेन्द्रप्रेषितराहुमिव मां जानन्त्वेतद्राज-सभायां मत्कुलीनैर्न्यायित: केन वञ्चिता इत्येवंविधवचनै: प्रियवचनैश्च तान् सम्मान्य तत्कृतपूर्वापरसिद्धान्तवचनान्याकलय्य परविद्वत्कृतात्मैक-राद्धान्तान् सर्वान्मायासिद्धान्तवचनैरेव पुन: खण्डयति खण्डितै: ।। २२८ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

श्रृणुध्व पण्डिताः सर्वे मायासिद्धान्तवादिना ।
पूर्वापराविरुद्धेन मयैवोक्तानि सर्वशः ।। २२९ ।।

यथा ब्रह्म तथा माया चोभयोरप्यनादिता ।
एकं तु रूपमुभयोः कान्तिकाञ्चनयोरिव ।। २३० ।।

गृह्यते काञ्चनं कान्त्या कान्तिस्तेनापि गृह्यते ।
चूर्णेपि काञ्चने खण्डे कान्तिस्तत्रैव तिष्ठति ।। २३१ ।।

न काञ्चनात्परा कान्तिः कान्तेरपि न काञ्चनम् ।
तथैव ब्रह्मणो माया नान्या स्वप्नेपि पण्डिताः ।। २३२ ।।

कतरेण च नाम्ना वा संभाव्ये ब्रह्ममायिके ।
माया तु सगुणा प्रोक्ता सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी ।। २३३ ।।

आत्मा तु निर्गुणः प्रोक्तो निराकारश्च निष्क्रियः ।
तथाव्यात्मन्यरूपे तु मायारूपं न दृश्यते ।। २३४ ।।

आकाररहिताकाशे प्राणिरूपैः समन्विते ।
न दृश्यते यथारूपं ज्ञानिभिश्चापि किं च न ।। २३५ ।।

सरूपायास्तु मायाया नैव नाशोस्ति मानवाः ।
उच्यते यदि नाशस्तु तर्हि सर्वत्र वर्त्तते ।। २३६ ।।

प्रलये रूपयोः किं न नाशो मारुतनाकयोः ।
अरूपरूपयोरस्ति लघुनोर्वस्तुनोः क्षयः ।। २३७ ।।

तथा मायात्मनोर्नास्ति महतोर्न कदाचन ।
माया लघ्वीति वक्तव्या पण्डितैर्न कदाचन ।। २३८ ।।

सा स्याद्यदि तथा विप्राः ब्रह्मापि लघुतां व्रजेत् ।
उभयत्र समाः सर्वाः श्रुतयः स्मृतयस्तथा ।। २३९ ।।

अज्ञानेपि तथा ज्ञाने ब्रह्म तावन्न दृश्यते ।
जगतः कारणाभावादरूपाच्च विशेषतः ।। २४० ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ज्ञानेन दृश्यते माया ज्ञाने त्वेव हि दृश्यते ।
दृश्यन्ते भानि रात्रौ तु दिवा नैव कदाचन ।। २४१ ।।

ब्रह्मस्थितौ प्रमाणं तु श्रुतिरेव हि सर्वदा ।
मायास्थितौ प्रमाणं तु श्रुतिश्चापि जगत्तथा ।। २४२ ।।

अद्वैतवादिनां वो न द्वैतापत्तिः कदाचन ।
ब्रह्माण्डनाशवेलायां जगत्स्थावरजङ्गमम् ।। २४३ ।।

मायायां लीयते सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
तन्मेलनान्महामाया निर्गुणा काशते सती ।
यथा चाहवनीयाग्निर्जडां समिधमाज्यकम् ।।

गृहीत्वा दीप्तिमतुलां प्राप्नोतीह तथैव सा ।
दीप्ताग्नौ भस्मतां यान्ति काष्ठानि विविधानि च ।। २४४-४५ ।।

ब्रह्माण्डोपि तथा विप्रा नाशतां यान्ति तां गतः ।
अथ मायामहाज्योतिर्निर्गुणं निश्चलं महत् ।। २४६ ।।

अरूप निर्विकारं च ब्रह्मज्योतिः प्रलीयते ।
दीपे दीपो यथा विप्राः क्षीरे क्षीरं जले जलम् ।। २४७ ।।

उभयोर्मेलनादूर्ध्वं किं वा भवति हे द्विजाः ।
भवन्त एव जानन्ति तं न जानामि पण्डिताः ।। २४८ ।।

अखण्डाकारतां प्राप्ता ज्योतिषस्तु तयोस्तथा ।
भवेत्कथं विभागस्तु ततः सृष्टिः कथं भवेत् ।। २४९ ।।

इति शंका न कर्त्तव्या विद्वद्भिर्ज्ञानिदृष्टिभिः ।। २५० ।।

परे ब्रह्मणि द्वे क्व माया क्व जायाः
क्व कायाः क्व यूयं क्व लोकाः क्व कालाः ।
क्व वेदाः क्व देवाः क्व वेत्ता क्व पाता
क्व विद्या क्व चात्मा क्व वादः क्व सृष्टिः ।। २५१ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ततः सर्वविपश्चितस्ततो निरुत्तरमुत्तरमाश्रित्य प्रकृतिमतमेव प्रकृतोचितमिति निश्चित्यापत्रपात्राण्यभवामेति शंकितान् तान् स्वान्तर्वाण्यनुमतिज्ञो नृपतिरपि रुचितिरस्कृतकृष्णलानलशुकार्ककान्तिभिः काश्मीरजपटसहस्रैः सनिष्कैः समर्चयाशिषं प्रार्थयामास ।। २५२ ।।

इष्टान्मे न स वारी (?) तु सूनुरारोग्यमेव ते ।
मातामही निधिं दद्यादायुष्यं तु पितामहः ।। २५३ ।।

ततो दिनकरकुलनन्दनोप्यनन्ता सुराशिषः संगृह्य नन्दनन्दनधृतभूधरोपत्यकोपान्त्यविधिरचितां मथुराभिधानीं पुरीमवजिगमिषवोद्य त्वे सर्वेपि निर्यान्त्विवति सुबलानि चतुर्बलान्यन्यानप्याज्ञापयेति मन्त्रिणमाज्ञप्यावरोधजनानपि त्वरयेति कञ्चुकिनोपि त्वरयामास ।। २५४ ।।

ततो भीष्मप्रजां नत्वा तर्क्तसिंहः प्रजास्तु ताम् ।
ईदृशं देहि पुत्रं नो जन्मजन्मनि धर्मिणम् ।। २५५ ।।

अन्नदानैश्च गोदानैर्भूदानैः काञ्चनैस्तथा ।
तृप्तानपि तदा विप्रान् तर्प्पयामासुरर्प्पणैः ।। २५६ ।।

राजास्य राजभार्यास्तु राजभार्यां सुपूज्यकाम् ।
याचयामासुरभ्यर्च्य देहिनोऽमुं पतिं सदा ।। २५७ ।।

स्व स्व भूषाश्च वेषाश्च किंचिच्छेषास्ततः परम् ।
दम्पतिभ्यो विसम्पद्भ्यो ददुर्दानानि सर्वशः ।। २५८ ।।

जह्नुपुत्रीं यजन्तस्तं राजपुत्राय याचिरे ।
पितृष्वकुटिलां बुद्धिं देहिनः परमोहिनीम् ।। २५९ ।।

विप्रबालान् सभारम्यान् समाहूय ततः परम् ।
तेभ्यो ददुः स्ववस्त्राणि निष्कपुष्पफलानि वै ।। २६० ।।

कृतार्थं मेनिरे तीरे ह्यात्मानं तु तदापरे ।
तर्पयन्तः पितॄन् देवान् ब्राह्मणांश्च यथाविधि ।। २६१ ।।

संसारान्निरयाद्यथा हरिपुरं गङ्गां गताश्चागताः
ये तेऽस्मत्पितरश्च मानहरिणा श्रीतर्क्तसिंहेन वै ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भूपाला इव तारयन्ति खलु नौ धर्मात्तरन्तो जना
आदौ कारणमत्र तारणविधौ राजा ततो जाह्नवी ।। २६२ ।।

सर्वे सर्वाणि कृत्वात्र त्यक्तुं गन्तुं मनो दधुः ।
मायां च मथुरां रम्यां मायालोके रता मुहुः ।। २६३ ।।

इत्थं सकललोकसंमतामतः काश्यपीपतिस्ततो मुकुलितकरः सकुलो मुहुर्मुहुर्जाह्नवीं ध्यायन्नपगतमायोपि मायामेव संस्मरन् मातरमिव बालकस्तां त्यजन् (स) सकलः सत्पथमासाद्य विविधदेशपुरग्रामलोकावलोकनरतः कतिपयदिवसैर्मथुरामाससाद ।। २६४ ।।

श्रीतक्तचम्पूललितप्रबन्धे
नवे सुगम्भीरपदानुयुक्ते ।
काण्डस्तृतीयः किल काण्डकल्पो
युतः सुधर्मैरभजत्समाप्तिम् ।। २६५ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थ काण्ड

भाषापतिं बभाषेथ राजा किं कृतवानिति ।
पुनः कथय मे ब्रह्मन् प्रियां राजकथां शुभाम् ।। २६६ ।।

भाषाया भारतीं श्रुत्वा ब्रह्मा हृष्टमनास्ततः ।
मन्दस्मितां प्रियां दृष्ट्वावोचद्राजकथां शुभाम् ।। २६७ ।।

अयि तिरस्कृतचक्रवाकपयोधरेथ राजा रविजतटिनीतटे परद्वारावतीमिव विराजमानां काञ्चनशिखररञ्जितमन्दरसमदेवमन्दिरैः सुन्दरीवृन्दारकवृन्दसेवितवृन्दारण्यशोभितां किंनरगृहसाध्यचारणतापसगन्धर्वसिद्धखेचरमुनिसेवितां देवकीतनयमोहितयोषित्समलंकृतामनन्तकपदस्पृशन्तीमाविष्णुपदोन्नतसौधपंक्तिप्रकाशितवीथिकां पुरोत्तमां मुक्तिदां तां मथुरां प्रपश्यन् यमुनां सस्मार ।। २६८ ।।

विविदुर्मथुरा रामा इव कृष्णं वनप्रियम् ।
श्रितराधाकुचं गोपं परदाररतं तु तम् ।। २६९ ।।

भामायुक्ततनुं द्विजेन्द्रसदनं मायाधवं मानिनं ।
श्यामाङ्गं धृतिनं सदा श्रितजनानन्दप्रदं सुन्दरम् ।। २७० ।।

शोणरक्षणवीक्षणं मधुहरं राजादिवन्द्यं सदा ।
दृष्ट्वा तं वसुदेवपुत्रमनघं ते माथुराः सस्मरुः ।। २७१ ।।

एवं सकलजनानानन्दयन्नथ मायापुरीचरितकार्यकल्पानि कार्याणि मथुरायामप्याचरन्ननुचरैः सहितस्तर्कसिंहमहीपालो मित्रतनयामतिमैत्र्यादर्चयन्नरविन्दलोचनाच्युतादिदेवान्यपि यजन्नजमुखकमलजनितजनानप्यखिलदानैर्मथुरान्धोभिश्च तर्पयन् मुकुन्दमेव प्रस्तौति ।। २७२ ।।

नारदादिवन्दितांघ्रिमंघ्रिशोभिनं पुरं
नीरदाभमिन्दिराप्रभुं नगेन्द्रधारिणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गोपिकापयोधरेक्षणं विलक्षणं विभुं
जारचोरभावगोपबालमाश्रये सदा ।। २७३ ।।

भानुजावनेषु देवयुक्तगोपसुन्दरी-
वस्त्रहारिणं सुपीतवस्त्रधारिणं परम् ।
र्बाहणं सुगर्विण सुपर्वण शरण्यकं
नौमि वृन्दकुञ्जगर्भनीतगोपिकारतम् ।। २७४ ।।

यामुनेयवारिकुम्भमस्तकस्त्रियः सृतिं
प्राप्य तत्पयोधराधरावलम्बनादरम् ।
वेणुगानधेनुपानसादरं विनायकं
मानसे नमामि देवदेवकीसुतं सदा ।। २७५ ।।

अथ महीपालस्तपनतनयां, विविधवनशोभितोभयतटिनीं, कुमुदिनी-वनशोभावहवनां, सकलाभीष्टवर्षिणीं कालिन्दीं संस्तुत्य, कृतयमुनातीर्थो-चितार्थानवशेषः शेषतीर्थार्थाय सानुचरः सदैवतां पुरीं नमस्कृत्य ततो निर्गत्य तत्र तत्र महीपालैः पूजितः सकलभालंकृतपुस्करमिन्दुरिव पुष्कर-मरांचकार ।। २७६ ।।

श्रीतक्तचम्पूललितप्रबन्धे
नवे सुगम्भीरपदानुयुक्ते ।
काण्डश्चतुर्थः किल काण्डकल्पो
युतः सुधर्मैरभजत्समाप्तिम् ।। २७७ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चम काण्ड

श्रृणु भारति वक्ष्यामि पुष्करे कृतमद्भुतम् ।
राजा तु सर्वतीर्थानां राज्ञी स्नात्वा यथाविधि ।। २७८ ।।

पूजयित्वा च देवांश्च पुष्करं च विशेषतः ।
ब्राह्मणान् भोजयन्नन्नै र्मिष्टैरिष्टैर्यथेप्सितम् ।। २७९ ।।

भवद्भिर्वाञ्छितं यत्तु दातुं शक्तोस्मि तद्द्विजाः ।
दानप्रतिसरं त्वेवं धृत्वा राजा ततः परम् ।। २८० ।।

यैर्यैस्तु प्रार्थित यद्यत्तत्तेभ्यो ददौ तदा ।
बहुनात्र किमुक्तेन राजा दात्रग्रणीस्ततः ।। २८१ ।।

अधनान् सधनान् चक्रे सधनानधनान् तथा ।
ब्रह्मपुष्करयोः स्तोत्र ततश्चक्रे नृपोत्तमः ।। २८२ ।।

नमो चित्स्वरूपाय मायाविहीनाय
नानानिदानाय वेदायनाय ।
गुणातीतरूपाय मूर्त्तित्रयाय
प्रशान्ताय देवासुरप्रस्तुताय ।। २८३ ।।

सदा नौमि वाणीपतिं लोकभूतिं
त्रितेजः सुमूर्तिं त्रिकालानरातिम् ।
त्रयाणां पतिं देवहाहाहिवीना-
प्सरः सन्नुतिं गोपतिं नो पतिं तम् ।। २८४ ।।

चतुर्वक्त्रिणे ब्रह्मणे मन्त्रिणे
कर्मिणे धर्मिणां धर्मिणे ते नमोस्तु ।
सदा ब्रह्मणो राविणे सर्गिणे
क्रूरिणां वैरिणे चक्रिणः सत्रिणे ते ।। २८५ ।।

नमो पुष्करायाव्ययाय प्रशस्ताय
लोकत्रये तीर्थराजाय ते वै ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क तीराय गम्भीरनीराय दूराय
पापात्मनां वेदसाराय भूमौ ।। २८६ ।।

तु-तारस्वरूपाय पूराय ते स्वा-
ह्वकान्ताररामाय ते मे नमः किम् ।
तवेलातले कं नु कीलालपाये
जनिज्वालकीलं न लान्ति प्रयान्ति ।। २८७ ।।

तदनु महाराजराजस्तगर्तासिहमहीपालस्त्वाशाविजयमापद्यप्रपद्य सकलचेतो रथानथ पथि मन्थरमेवानुयांत्विति सर्वमाज्ञप्य सत्पथे रथैः सह प्रमोदपूर्णान्तरालस्ततस्तदोद्गत्या स्वपुरमापरिपूर्णजनपदसृतिमेवाश्रित्य सकलवाहिनीजनचारमन्त्रिमित्रकलत्रपुत्रमातृसहितसन्नाभभरितार्भकसमुद्रतटविराजद्राजभवनमाशु पुनरपि स सुखमाससाद ।। २८८ ।।

श्रीतक्तचम्पूललितप्रबन्धे
नवे सुगम्भीरपदानुयुक्ते ।
काण्डः समर्थः किल पञ्चमोयं
युतः सुधर्मैरभजत्समाप्तिम् ।। २८९ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षष्ठ काण्ड

ततो योधपुरे जातां देवविस्मयकारिकाम् ।
अश्रुताद्दृष्टपूर्वां तु शृणु नान्यमनाः प्रिये ।। २९० ।।

स्वागतं नृपतिं दृष्ट्वा तन्मन्त्री प्रभुरुत्तमः ।
पौरानाज्ञापयामास पुरालंकरणे पुरः ।। २९१ ।।

तदाज्ञया ततश्चक्रुर्यथाज्ञप्तं तथैव ते ।
सुवर्णशिखरैं रम्यां पताकैश्चापि शोभिताम् ।। २९२ ।।

वितानतोरणैर्बद्धां रत्नकाञ्चनरञ्जिताम् ।
चित्राम्बरयुतैः सौधैः शोभितां च सुचित्रकैः ।। २९३ ।।

गतागतमहानागरथाश्वैश्चापि संकुलाम् ।
आपूर्णराजमार्गां तां देवतायतनैर्युताम् ।। २९४ ।।

अलंकृतां पुरीमेवं दृष्ट्वामात्यास्ततः परम् ।
गोत्रापतिं यदानेतुं कृतयात्रं स्वगोत्रिभिः ।। २९५ ।।

निर्गताः सुरलोकात्तु गीर्वाणाश्चापि निर्गताः ।
पुष्पकस्था स्थिता मूर्द्ध्नि पुरो दृष्टुं नृपोत्सवम् ।। २९६ ।।

युवत्यश्च युवानश्च बालवृद्धाः स्वलंकृताः ।
स्वपुरीनायकं द्रष्टुं स्थिताः सौधेषु पंक्तितः ।। २९७ ।।

यथा चन्द्रं चकोरा वै कामिन्यः कामुकानिव ।
प्रभवे वत्सरे मासे शुचौ पक्षेऽर्जुने दिने ।। २९८ ।।

पंचमे गौरवे वारे चोत्तरायां शुभे धनौ ।
कुलीरस्थे सहस्रांशौ हिमांशौ तु मृगेन्द्रगे ।। २९९ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जीवे कलशगे चोक्षिण स्थिते सौरौ सति प्रिये ।
शुभस्थानेषु शेषेषु खेचरेषु सुसत्सु वै ।।
तक्तसिंहमहीपालः प्रविवेश निजैः पुरे ।। ३००।।

पौराः पुरोध्वजालंकृतां भेरीदुन्दुभिकाहलीतालाद्यनेकवाद्यरचनां सनाराचचापासिभृद्युतवाजिराजिताम्, पथि रथियुतसुरथां न शान्त-सौदामिनीधरधाराधरसंयुतद्यामिव संततच्युतवसुसमासारभृन्मतंगजयुतां, सामन्तनृपतिसमधिष्ठितश्रेष्ठगजकुलाकुलां, न्यस्तान्यशस्त्रधृताग्निशस्त्र-पत्तिगुप्तां सकलापानिलसमसुमटनपटुतरनृपसैन्धवनिबद्धां, कृतजह्नुदु-हितृनिषेवणपरावनीयविषयसमानीतनिजप्रभुविजयकलापालंकृततनुचेतो-मात्यनेत्रीं गान्धर्वयक्षकिन्नरसाध्यसिद्धहरित्यालकांगनामोदितवाराङ्गना-गानप्रतिनादितां तगतसिंहनरेन्द्राराधितजह्नुशैलेन्द्रतनयाधिष्ठितपुष्पकयु-गपवित्रीकृतां, प्रशस्तसप्तिविलसत्पञ्चशरात्मजभ्रान्तिवहन्नृपालबाल-मालालंकृतामनन्तां तां वाहिनीं पश्यन्तः सकलसज्जनाञ्चितमञ्चयुङ्म-तंगजेन्द्रे तगतसिंहनरेन्द्रं ददृशुः ।। ३०१ ।।

आयातं कृतयात्रमाशु नृपतिं सौन्दर्यरत्नाकरं
दृष्ट्वान्योन्यमदन्तमोदहृदया पौरास्तदा प्रोचिरे ।
अस्माकं नगरे नरेन्द्रसुवियोगानि स्वयंभूरहो
त्वेतावन्ति दिनानि मन्दहृदयः किं निर्ममे निर्ममः ।। ३०२ ।।

दानगानयानमाननोपमं सुरोपमं
नन्दनोद्भवैः सुमैर्निलम्पनायकोर्चयन् ।
नंजभाग्यभोग्ययोग्यमाशु वीक्ष्य तं नृपं
देवधामनीतदेवतो जगाम विस्मितः ।। ३०३ ।।

तदनु स्थिरापालोपि सकलसुरार्चितशचीपतिरिवाशेषप्रजाभिरर्च्चि-तस्वानुचरानुपमितकाञ्चनरत्नमयकलशकीलितसौविदमल्लाकलितशिवि-कान्तस्थविराजन्मातृकलत्रस्ततो दास्यधिष्ठितशकटसहस्रैः शताधोर्णैः स्यन्दनारोहशतपञ्चकैः सादिपञ्चसहस्रैरपरिमितभटैः समन्वितश्चतुर-ङ्गिणीसंगः स्वजनकेदारकृपावृष्टिमाचरन्नत्वरितमार्गः स्वर्गनिभनिजपु-रीराजमार्गो दुर्गद्वारमासाद्य स्मृतेष्टदेवताचरणसरोरुहः प्रेम्णाम्नायनि-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

केतनेभ्यो बहुवसूनि[1] प्रदाय्य प्राप्तसकलमङ्गलो निजराजभवनमासाद्य-स्व-स्व-स्थानगतमातृपुत्रकलत्रबन्धुः सर्वैः सह सभायां नृपासनमास-साद ।। ३०४ ।।

पाताले कृतवासिनोपि सहसा चेन्द्रादयो देवता
आगच्छन्तु दिदृक्षवोऽवनिपतेः पुर्यां प्रवेशोत्सवम् ।
इत्येवं किल दुर्गभूमिपरितः शीघ्रं शतघ्नीशतं
निर्विघ्नं शुचिना सुयोज्यमिति तत्पालान् जगाद प्रभुः ।। ३०५ ।।

तदाज्ञयाग्निना लग्नशतघ्नीरवकम्पिते ।
पुरे पौरा महाभीतिं प्रापुः कम्पितदेहिनः ।। ३०६ ।।

राज्ञेदानीं किमारब्धं कार्यं कम्पितपर्वतम् ।
अहो दैवज्ञ सर्वज्ञ किंकृते नृपसत्तमः ।। ३०७ ।।

कम्पयत्यधुना लोकान् वद शीघ्रं यथार्थतः ।
आगः किमागतं तस्य ह्यस्मत्तः प्रथमं वद ।। ३०८ ।।

स्वधैर्यमिव जानाति ह्यस्मद्धैर्यं नृपोत्तमः ।
इत्थमाश्चर्यमापन्ना लोकाः शान्तिं प्रपेदिरे ।।
शतघ्नीजातरावाणां संख्या धर्मविलोपिनाम् ।
ततोमात्याश्च भृत्याश्च राजानो बांधवास्तथा ।। ३०९ ।।

पण्डिताश्च सुमित्राणि सभायां नृपमूचिरे ।। ३१० ।।

किं किं न मानहरिवंशपयोधिचन्द्रे
निश्चन्द्रदेशविलसन्निजकीर्त्तिचन्द्रे ।
दीप्ते निरन्तरसमर्चितमौलिचन्द्रे
पश्यामः कौतगतसिंहसुपूर्णचन्द्रे ।। ३११ ।।

धन्योसि जह्नुदुहिता सदनं त्वयाद्या-
नीता हि शंकररवराय तु देहि तां त्वम् ।

---

१ वस्तूनि

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नीता मनोरथततिः सकलाफलत्वं
राज्यं चिराय कुरु नोऽत्रतु तत्त्वसिंहः ।। ३१२ ।।

अथ पृथ्वीपतिरपि तद्वचनमाकर्ण्य प्रमुदितचेतसा सभ्यान्निरीक्ष्य शृणु प्रधानवर्य ! प्रभूणामन्वयमितोनिर्गत्य विजयपुरमासाद्य कतिपयदिवसैरस्मद्रामसिंहनृपशिरोमणिकृतधर्मराज्यकार्याण्याकलय्य ततो गरीयसीमिन्द्रप्रस्थनगरीं निरीक्ष्य तत्र पाछपदवाच्यमनिर्वाच्यवैभवयुतमपि तन्निःशङ्कमालोक्य स्वेच्छयैव विहृत्य ततो मायापुरीपुरः प्रकाशमानजाह्नवीतटमाश्रित्य तत्र यात्रोचितमर्यादावर्त्तिनीभगवद्भागीरथीप्रसादमादाय तदनु मथुरामालोक्य वृन्दावनरतराधिकारुक्मिणीरमणमादरतोबलरमणधर्मसोदर्यादिदेवताश्च नमस्कृत्य ततो निर्गत्य कृष्णदुर्गनृपालादिभिः सुपूजिता विधिसरोवरमासाद्य किरिरूपविश्वसृजादिदेवानपि साष्टांगं नतिभिरेव नत्त्वामात्यादिसहितास्त्वरिताः स्वपुरीमिमां ससुखमविशाम ।। ३१३ ।।

जानामि प्रभुनामधेयनितरां त्वामप्यहं सर्वदा
राज्यस्य प्रतिपालनेऽहमिव यातासि प्रयुक्तः श्रमैः ।
राज्यस्यास्य धुरं च नेतरजनैः शक्यां सुवोढुं शतै-
र्लोकेस्मिन् खलु भूपतेस्तु गुणिनो नेच्छन्ति मित्राणि किम् ।।३१४ ।।

जानीमो न कदाचन श्रमपदं मार्गेषु यात्रासु वा
जाह्नव्याः कृपया वयं तु सुखिनः श्रान्तोसि किं त्वं प्रभो ।
प्राचीनैः कृतबन्ध एष खलु भो त्याज्यः कथं चावयोः
सम्बन्धस्तु गुणाश्रये प्रियतमो नार्यां भुजङ्गस्य वा ।। ३१५ ।।

तर्कव्याकरणेषु काव्यकवितालंकारशास्त्रेषु ते
मीमांसाप्रमुखेषु नीतवयसः किं दुर्लभं विद्यते ।
कालेऽस्मिन्नृपनीतिकौशलमते न त्वादृशान्विद्महे
ह्यद्वैतामलशस्त्रखण्डितमहाद्वैतोद्य मान्योसि मे ।। ३१६ ।।

आङ्गीरसोसि वक्तृत्वे नीतौ काव्योसि भो प्रभो ।
विप्रेषु दीक्षितोसि त्वं सत्यसंधोसि संसदि ।। ३१७ ।।

त्वद्भ्रातराविमौ धीरौ कार्ये तीव्रमनीषिणौ ।
त्वादृशावेव सर्वेषु नात्रकार्या विचारणा ।। ३१८ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यात्रायां पात्रतां यातौ प्रीतेरत्रापि मे सदा ।
इमे ममानुगाः सर्वे मत्कृते श्रमिणः खलुः ॥ ३१९ ॥

अथ कृतकृत्यसंभवमुत्पयोधिमग्नचेता नृपशिरोमणिरन्तःप्रवेष्टुमना संसदि मन्त्रिप्रभृतीन् विश्वान्यथोचितवहुमानैर्बहुमान्याज्ञप्य च तैः सम्मानितः सकलराजमङ्गलयुतो नानाविधमणिनिबद्धप्रकाशमानमवरोधजनपूर्णमपरिमितभाग्यसम्पन्नसौधोत्तममाविवेश ॥ ३२० ॥

ततो नृपाज्ञया सर्वे कृतयात्रा मुदान्विताः ।
गङ्गाकथां ब्रुवन्तस्ते स्वस्ववेश्मानि पेदिरे ॥ ३२१ ॥

तदनु तत्रावनीपतिरप्यानीतजह्नुकन्याप्रदानोचितवैद्यनाथवरमासाद्य तं विधिवदभ्यर्च्य तां समर्प्पयन्नखिलोत्सवैरानन्ददां वृन्देति नाम्नीं नारायणनरवराय प्रदाप्याखिलद्विजवरान् भूरिवरान् दक्षिणैस्तर्पयामास ॥ ३२२ ॥

ततः तगर्तसिंहसार्वभौमस्त्वेन्द्रभूविराजमान गौतमीतटनिकटसिद्धान्तपुरवासिनौ वाराणसीशचरणकमलान्तिकनीतबहुसमावुमाकान्ताज्ञया लब्धयोधपुरचिरवासौ निगमागमाध्वनिरीक्षणावनवधिसंसृतिविषधिज्वलतृष्णावाडवप्रतप्तावपि तगर्तसिंहचन्द्रकरुणाकिरणप्रसिक्तौ शेषमारमणाभिधानौ कामितार्थैरनन्यार्थिनौ चकार ॥ ३२३ ॥

राज्यं करिष्यन् शरदां सहस्रं
रिपून् जयन्काविवदोः सहस्रः ।
यज्ञांश्च कुर्वन्निव दक् सहस्रः
सुखी सदास्ते स्वजना सहस्रः ॥ ३२४ ॥

अपारराजगुणधेर्जाह्नवीगमनमौक्तिकम् ।
मयेदानीं समानीतं धारयन्तु विपश्चितः ॥ ३२५ ॥

शब्दा हि ब्रह्मरूपास्युर्नाविष्णुः पृथिवीपतिः ।
तयोस्तत्त्वं विना प्रोक्तं प्रबन्धं शोधयन्तु वै ॥ ३२६ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गोविप्रेभ्यः शुभं कांक्षे राजभृत्येभ्य एव च ।
सकुटुम्बाय राज्ञे मे नित्यं नित्यं पुनः पुनः ।। ३२७ ।।

करभूमिनवक्षोणी वर्षे मासि धनौ सिते ।
पक्षे पञ्चमघस्रे तु भार्गवस्य दिने शुभे ।। ३२८ ।।

समाप्तः सम्पदायुक्तो नृपनाम्ना तु विश्रुतः ।
शेषप्रणीत आभूमेः प्रबन्धो विजयत्यलम् ।। ३२९ ।।

श्रीतक्तचम्पूललितप्रबन्धे
नवे सुगम्भीरपदानुयुक्ते ।
काण्डस्तु षष्ठः किल काण्डकल्पो
युतः सुधर्मैरभजत्समाप्तिम् ।। ३३० ।।

इति शेषप्रणीत तक्तचम्पूप्रबन्धः समाप्तः । श्रीशम्भो भवतु भवताम् ।। श्रीः ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy